महर्षि दयानन्द सरस्वती की
उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा
का मुख पत्र

**वर्ष** : ५९ **अंक** : २३
दयानन्दाब्द: १९३
विक्रम संवत्: मार्गशीर्ष शुक्ल२०७४
कलि संवत्: ५११८
सृष्टि संवत्: १,९६,०८,५३,११८

**सम्पादक**
डॉ. दिनेशचन्द्र शर्मा

**प्रकाशक**-परोपकारिणी सभा,
केसरगंज, अजमेर- ३०५००१
दूरभाष: ०१४५-२४६०१६४

**मुद्रक**-श्री मोहनलाल तँवर
वैदिक यन्त्रालय, अजमेर।
दूरभाष : ०१४५-२४६०८३१

**परोपकारी का शुल्क**
**भारत में**
**वार्षिक**-२०० रु., **द्विवार्षिक**-३९० रु.
**त्रिवार्षिक**-५८० रु.
**आजीवन** (१५ वर्ष)-२००० रु.
**एक प्रति** - १५/- रु.
**विदेश में**
**वार्षिक**-५० यू.के. पाउण्ड/८० यू.एस.डॉलर
**द्विवार्षिक**-९५ पाउण्ड/१५२ डॉलर
**त्रिवार्षिक**-१४० पाउण्ड/२२५ डॉलर
**आजीवन** (१५वर्ष)-५००पा./८०० डॉ.
**एक प्रति** - ३ पाउण्ड
**एक प्रति** - ४ डॉलर

**वैदिक पुस्तकालय** : ०१४५-२४६०१२०
**ऋषि उद्यान** : ०१४५-२६२१२७०

ओ३म्

*विद्याविलासमनसो धृतशीलशिक्षा:,*
*सत्यव्रता रहितमानमलापहारा:।*
*संसारदु:खदलनेन सुभूषिता ये,*
*धन्या नरा विहितकर्म परोपकारा:।।*

**RNI. No. ३९५९ / ५९**

# परोपकारी

## दिसम्बर प्रथम २०१७

## अनुक्रम


| | | |
|---|---|---|
| ०१. रोहिंग्या बनाम राष्ट्रीय सुरक्षा | सम्पादकीय | ०४ |
| ०२. ब्रह्मयज्ञ का वैदिक विधान | डॉ. धर्मवीर | ०६ |
| ०३. कुछ तड़प-कुछ झड़प | प्रा. राजेन्द्र 'जिज्ञासु' | ०९ |
| ०४. वेद ईश्वरीय ज्ञान क्यों? | पं. उदयवीर शास्त्री | १३ |
| ०५. प्राणोपासना-४ | तपेन्द्र वेदालङ्कार | १७ |
| ०६. शङ्का - समाधान - १४ | डॉ. वेदपाल | २० |
| ०७. वैदिक पुस्तकालय के नये संस्करण | | २२ |
| ०८. पावन-पावन दयानन्द | इन्द्रजित् देव | २३ |
| ०९. वेदों में आधुनिक अद्भुत विज्ञान | डॉ. विक्रम कुमार | २९ |
| १०. संस्था-समाचार | | ३२ |
| ११. भारत में मूर्ति-पूजा क्यों? | डॉ. बिजेन्द्रपाल सिंह | ३४ |
| १२. समर्पित व्यक्तित्व-आचार्य... | रामगोपाल गर्ग | ३९ |
| १३. पुस्तक परिचय | देवमुनि | ४० |
| १४. आर्यजगत् के समाचार | | ४१ |


www.paropkarinisabha.com
email : psabhaa@gmail.com
- **उपनिषद्, दर्शन, प्रवचन आदि सुनने हेतु बटन दबाएँ** -
**www.paropkarinisabha.com** → **Daily Pravachan**

*लेख में प्रकट किए विचारों के लिए सम्पादक उत्तरदायी नहीं है। किसी भी विवाद की परिस्थिति में न्यायक्षेत्र अजमेर ही होगा।*

सम्पादकीय

# रोहिंग्या बनाम राष्ट्रीय सुरक्षा

किसी भी राष्ट्र की समुन्नति, सुरक्षा तथा सुस्थिरता के लिए उस राष्ट्र के नागरिकों का ज्ञानवान्, शक्तिमान् तथा राष्ट्र के प्रति श्रद्धान्वित होना आवश्यक है। विश्व के सभी देशों में इन्हीं बातों को किसी न किसी रूप में ध्यान में रखकर ही ऐसी सांविधानिक व्यवस्थाएँ की गई हैं कि नागरिक राष्ट्र के प्रति निष्ठावान् होने को बाध्य होते हैं। राष्ट्र की सुरक्षा के प्रति घात या उपेक्षा का व्यवहार करने वालों को कठोर दण्ड की व्यवस्था प्रायः सभी राष्ट्रों में है। यहाँ तक कि सार्वभौमिक इस्लाम-धर्म को मानने वाले राष्ट्र भी अपने राष्ट्र की सुरक्षा के प्रति अत्यधिक सतर्क रहते हैं। वे अन्य राष्ट्रों के अपने समान मजहबी मुसलमानों को भी, वहाँ की नागरिकता देने से पूर्व यह ध्यान रखते हैं कि नागरिकता पाने वाला व्यक्ति जिस देश से आया है निश्चय ही अपने देश के संस्कार, सभ्यता, रीति-रिवाज और परम्पराएँ उसके मनोमस्तिष्क में स्वाभाविक रूप से स्थापित हैं और वह इस देश में भी उसी प्रकार का व्यवहार करने को स्वभाववश बाध्य होगा, जो उनके राष्ट्र की संस्कृति, सभ्यता या सुरक्षा के विरुद्ध होने से हानिकर होगा और यदि कोई योजनाबद्ध रूप से या षड्यन्त्रपूर्वक किसी राष्ट्र का हिस्सा बलात् बनना चाहे तो यह तो दण्डनीय अपराध है। व्यक्तियों/नागरिकों की मानसिकता बदलने से राष्ट्रों के नक्शे बदल जाया करते हैं; यह हमने अफगानिस्तान, पाकिस्तान, बांग्लादेश इत्यादि के निर्माण से देख ही लिया है। यह समस्या और अधिक गम्भीर तब होती है जब राष्ट्र का मस्तिष्क कहा जाने वाला बुद्धिजीवी वर्ग फैशन के कारण, स्वार्थ या लोभ-वश ऐसी घटनाओं को स्वयं निमन्त्रित करता है। ऐसे सम्प्रदायों, मतों और मजहबों को मानने वालों से हमें और अधिक सतर्क रहने की आवश्यकता होती है, जो अपने तथाकथित ईश्वरीय मजहब को राष्ट्र से ऊपर रखने का दावा करते हैं और तथाकथित एवं छद्म-धर्मनिरपेक्षतावादी बुद्धिजीवी वर्ग इतिहास की सीख को भुलाकर उनकी पैरवी करने लगता है।

अभी हाल में म्यांमार से निकले या निकाले गए रोहिंग्या मुसलमान, जिनकी संख्या लगभग 40-45 हजार है, वे अवैध रूप से भारत में प्रविष्ट हुए हैं। यह आज की ज्वलन्त समस्या है जिस पर गंभीरता से विचार करना आवश्यक है।

देश की तथाकथित धर्मनिरपेक्ष राजनीतिक पार्टियाँ और कुछ स्वयंसेवी संगठन भारत की सरकार को मानवता की दुहाई देकर रोहिंग्या मुसलमानों को भारत में स्थापित करने का आन्दोलन चला रहे हैं। संवैधानिक दृष्टि से जिन्होंने भारत में अनधिकृत रूप से प्रवेश किया है वे भारत के शरणार्थी कैसे माने जाएं? और तब, जबकि रोहिंग्या मुसलमानों के **जेएमवी जेहादी संगठन** का संबन्ध पाकिस्तान में लश्कर एवं आईएसआई संगठनों के साथ है। पाकिस्तान ने जेहादी तंजीमों में रोहिंग्या मुसलमानों को सम्मिलित किया है और केवल धर्म के आधार पर ही किसी को शरण देना ये भारतीय संविधान के अन्तर्गत नहीं आता। यहाँ तक कि म्यांमार तक में भी इन्हें गैर-कानूनी माना गया है, क्योंकि मूल रूप में इन्हें बांग्लादेशी प्रवासी माना जाता है। ऐसी दशा में जबकि म्यांमार और बांग्लादेश में ही इनका स्थापन नहीं है तो भारत में इनके अवैध प्रवेश को किस प्रकार शरणार्थी के रूप में स्वीकार किया जा सकता है?

भारत की तात्कालिक चिन्ता यह है कि रोहिंग्या मुसलमान दिल्ली के निकट मेवात, जम्मू कश्मीर, हैदराबाद, उत्तर प्रदेश और राजस्थान के मुस्लिम बहुल क्षेत्रों में छिपे हुए हैं, जिन्हें स्थानीय तथाकथित राजनीतिक पार्टियाँ और मुस्लिम संगठनों द्वारा मानवता की आड़ में समर्थन दिया जा रहा है। गैर-कानूनी ढंग से रहने वाले रोहिंग्या मुसलमानों ने दिल्ली में भी अपने पैर पसारे हैं और अब प्रतीक्षा यह है कि रोहिंग्या मुसलमानों के संबन्ध में सर्वोच्च न्यायालय में विचाराधीन प्रकरण में क्या निर्णय आता है। आश्चर्य का विषय है कि राष्ट्रीय राजनीतिक पार्टियाँ तथा स्वयंसेवी संगठन धर्म-निरपेक्षता के नाम पर अवैध रूप से भारत में रह रहे रोहिंग्या मुसलमानों का समर्थन इस तर्क के साथ

कर रहे हैं कि वर्तमान सरकार रोहिंग्या मुसलमानों के विरुद्ध है और उसे मानवतावादी दृष्टिकोण अपनाते हुए इन्हें भारत में रहने देना चाहिए। जबकि चाणक्य ने कहा है कि सभी रीति-रिवाजों, धार्मिक विश्वासों और मतवादों से ऊपर राष्ट्र है, क्योंकि राष्ट्र निर्जीव संज्ञा नहीं है। वह राष्ट्र के जीवन्त नागरिकों के अस्तित्व का नाम है, जिनकी सुरक्षा शासन का पुनीत कर्त्तव्य है।

उल्लेखनीय है कि 1948 में रोहिंग्या मुसलमानों का बौद्धों के साथ संघर्ष प्रारम्भ हुआ था और उनमें अलगाववादी तथा जेहादी प्रवृत्तियाँ विकसित होने लगी थीं। म्यांमार में जिसे रखाइन कहा जाता है वही इन रोहिंग्या मुसलमानों का मूल स्थान है। यह बांग्लादेश की सीमा से लगा हुआ है। इसलिए अन्तर्राष्ट्रीय मानववादी चिन्ता इस तथ्य की अनदेखी करती है कि रोहिंग्याओं ने बौद्धों के साथ हिंसक प्रवृत्तियों में भाग लेकर आजादी से पूर्व अंग्रेजों से भी समर्थन ले लिया था। यह भी ध्यान देना होगा कि रोहिंग्या मुसलमानों की जेहादी प्रवृति को पाकिस्तानी जेहादी तथा मध्य पूर्व के विभिन्न मुस्लिम देशों के जेहादी संगठनों को आर्थिक तथा शस्त्रों का सहयोग मिल रहा है और इसीलिए पाकिस्तानी जेहादी अत्ताउल्लाह इन रोहिंग्या मुसलमानों के जेहादी संघर्ष का मुखिया बना हुआ है। अराकान रोहिंग्या सॉल्वेशन आर्मी के झंडे के नीचे साम्प्रदायिक हिंसा का खुला ताण्डव नृत्य म्यांमार में देखने को मिला है।

वैदिक सिद्धान्तों के अनुसार भी देखा जाए तो राष्ट्र विचारधाराओं और सार्वभौमिक मानवीय सिद्धान्तों पर आधारित होता है। जब देश में अवांछित गतिविधियाँ दृष्टिगोचर हों और वे देश के मूल निवासियों के लिए ही संघर्ष पैदा करने लगें तो ऐसी स्थिति में मानवाधिकारी संगठनों का यह तर्क बेमानी हो जाता है कि भारत की परम्परा **अतिथि देवो भव** की है, लेकिन अतिथियों ने ही आकर धोखे से भारत में राजनीतिक षड्यन्त्र किया और हिंसा का ताण्डव नृत्य कर सत्ता पर काबिज होने के अनेक उदाहरण प्रस्तुत किए। भारत का विगत इतिहास ऐसी अनेक घटनाओं से परिपूर्ण है। क्या हम मोहम्मद गौरी को 1191 के युद्ध में पराजय के बाद उसे छोड़ने और जैसलमेर में **आधे साके** की घटना, जिसमें कांधार के अमीर खाँ को लूणकरण ने आश्रय दिया और आखिर में उसी ने रात के अंधेरे में अतिथि होते हुए साका करने को बाध्य कर दिया- ये घटना भूल सकते हैं?

मानवीय दृष्टिकोण से यह उचित है कि शरणार्थियों को भोजन और रहने की सुविधा तात्कालिक रूप से प्रदान की जाए, लेकिन वे जिस देश से संबन्धित हैं उस देश की कानूनी व्यवस्था और इनके नागरिक अधिकार की व्यवस्था का निर्णय तो अन्तर्राष्ट्रीय संगठन (यूएन) को ही करना चाहिए, क्योंकि यह संघर्ष वस्तुतः मानव अधिकारों का नहीं है अपितु आतंकवादियों की जेहादी प्रवृत्ति का द्योतक है। अन्तर्राष्ट्रीय कानून के अन्तर्गत भी राजनीतिक विचारधारा, धर्म इत्यादि के आधार पर भेदभाव तो नहीं किया जा सकता, लेकिन भारत के सवा सौ करोड़ भारतीयों के जीवन की सुरक्षा के प्रति भी भारत सरकार को अपना दायित्व निभाना आवश्यक है।

हमें ऐसी धमकियों को भी नहीं भूलना चाहिए जब विदेशों से आयातित मत-मतान्तरों के अनुयायी अपनी जनसंख्या के बल पर विभिन्न चुनाव-क्षेत्रों में सरकारों और प्रत्याशियों को ब्लैकमेल करते हैं तथा राष्ट्र की स्थिरता और इसके मूल नागरिकों को 'देख लेने' या 'मिटा देने' की धमकियाँ देते रहते हैं।

हमारे शास्त्रों में अध्यात्म के पश्चात् सबसे अधिक बल स्वराष्ट्र या स्वराज्य की रक्षा पर दिया गया है। वेदों के 'राष्ट्रसूक्त' या 'स्वराज्यसूक्त' इसके उदाहरण हैं। अतः राष्ट्र-रक्षा को प्राथमिकता देना सरकार के साथ-साथ वैदिकधर्मियों का भी दायित्व है। वेद कहता है-

**ओ३म् आयद्वामीयचक्षसा मित्र वयं च सूरयः।**

**व्यचिष्ठे बहुपाय्ये स्वराज्ये यतेमहि।।**

''हे व्यापक दृष्टि-दूरदृष्टि वाले और परस्पर स्नेहसूत्र में आबद्ध श्रेष्ठ पुरुषो! आओ, तुम और हम सब मिलकर इस विस्तृत तथा हम सबों के द्वारा रक्षणीय स्वराज्य-स्वराष्ट्र की स्थिरता तथा उन्नति के लिए प्रयत्न करें।''

**दिनेश**

प्रवचनमाला-१४

# उपासना का वैदिक विधान

**प्रवचनकर्त्ता - डॉ. धर्मवीर**

**लेखिका - सुयशा आर्य**

**उपत्वाग्ने दिवे दिवे दोषावस्तर्धिया वयम्।**
**नमो भरन्त एमसि।**

मैंने आपके सामने एक मन्त्र रखा, यह बहुत सरल है, बहुत छोटा है, ऋग्वेद के पहले मण्डल के पहले सूक्त का मन्त्र है। उपासना हममें से सब करते हैं। जो साकार मानते हैं वो भी करते हैं, जो निराकार मानते हैं वो भी करते हैं। किसी को भी मानते हैं किसी भी मत सम्प्रदाय में हैं, सभी करते हैं। लेकिन उपासना का आदर्श कैसा हो सकता है, उपासना का प्रयोजन क्या हो सकता है- यह बात बहुत स्पष्ट और बहुत सरल शब्दों में इस मन्त्र में कही है-

**'उपत्वाग्ने दिवे दिवे.....एमसि।'**

क्योंकि पूरा सूक्त अग्नि देवता का है और इसका ऋषि मधुच्छंदा है। देवता जब अग्नि है तो अग्नि से संबन्धित चर्चा ही इसमें है। 'अग्नि' यहाँ आग तो हो नहीं सकती क्योंकि इसके विशेषण, इसकी शब्दावली ही ये बता रही है। मन्त्रों के शब्दों को ही देखकर हम अर्थ का निर्णय कर सकते हैं। 'अग्ने' संबोधन है और संबोधन जड़ को होता नहीं है। हे झाड़ू! तू आजा, हे रोटी! तू मिल जा! ऐसा तो होता नहीं है। संबोधन है तो चेतन को है और चेतन को है तो किस चेतन को है, यह देखना है। तीन ही परिस्थितियाँ हो सकती हैं-या तो हम दो कुछ आपस में बात कर रहे हैं या किसी तीसरे के बारे में हम कह रहे हों या कोई व्यक्ति हमें स्वयं कह रहा हो। जब स्वयं कहता है तो उत्तम पुरुष होता है और जब अन्य की बात होती है तो प्रथम पुरुष होता है। जब हम आमने-सामने बात करते हैं तो मध्यम पुरुष होता है। संबोधन है-**अग्ने! त्वा उप एमसि**- हे अग्ने! हम तो तेरे नजदीक आना चाहते हैं, हम तेरे पास आना चाहते हैं। उप अर्थात् निकट, समर्पणता, जिससे आपका उपासना शब्द बना है। आने का प्रकार क्या होगा, विधि क्या होगी? उपासना कब करनी चाहिए? कैसे करनी चाहिए? इसे बहुत ही अच्छे शब्दों में, बहुत ही सरल शब्दों में कहा है। **उपत्वाग्ने दिवे-दिवे**, एक शब्द दो बार पढ़ा है। 'दिव' दिन को कहते हैं। मन्त्र कहता है कि उपासना कोई एक बार करने की चीज नहीं है कि वो नवरात्र आयेंगे, तब कर लेंगे, वो तीर्थ होगा तो वहाँ कर लेंगे, कोई कथा रखी है तब कर लेंगे, ऐसा नहीं है। उपासना करने का समय है 'दिवे दिवे', प्रतिदिन। योग दर्शन का एक सूत्र याद करो कि उपासना के लिए शर्त क्या है। **स तु दीर्घकाल नैरन्तर्य सत्कारासेवितो दृढभूमिः।** यह उपासना का ही प्रश्न नहीं है, यह आपके अध्ययन का प्रश्न हो सकता है, यह आपके व्यायाम, बल-अर्जन का प्रश्न हो सकता है या कोई संगीत के अभ्यास का प्रश्न हो सकता है, या कोई चीज आप सीखना चाहते हैं उस सबका प्रश्न हो सकता है। मतलब आप किसी चीज को अपने अन्दर मजबूत बनाना चाहते हैं, तो यह कहता है कि उपासना के लिए भी तीन प्रकार का ध्यान देना होगा। एक तो **नैरन्तर्य**-उसमें निरन्तरता होनी चाहिए। आप व्यापार भी करोगे तो ऐसा नहीं होगा कि चार दिन करोगे और छः दिन छोड़ दोगे, ऐसा तो नहीं चलेगा। चिकित्सा करने बैठोगे तो यदि रोज नहीं बैठोगे तो मरीज भाग जाएगा या मर जाएगा। उपाय क्या है-निरन्तरता। उपासना में प्रायः हमको बड़ी चिन्ता सताती है। हमको ऐसा लगता है कि बहुत दिन हो गए संध्या करते, कुछ नहीं हुआ। हमको १० साल हो गए, २० साल हो गए, पता नहीं कितने साल हो गए, तो कई बार प्रश्न पूछते हैं लोग, जी यह संध्या करते इतने साल हो गए, अब तक तो कुछ हुआ नहीं, कब होगा? मैंने कहा तुम घर से निकले थे कहीं जाने के लिए तो कब तक चलोगे? हो सकता है चलते-चलते बहुत दिन हो गए हों, लेकिन चलना कब तक है? जिसके लिए निकला था वह कार्य पूर्ण होने तक चल। इसके लिए वेदान्त का एक सूत्र याद करो **आप्रापणात् तत्रापि दृष्टम्**- प्रश्न है-यह उपासना कब तक? अरे जब तक नहीं पहुँचे, तब तक। उद्देश्य पहुँचना है तो, कब तक चलने का तो

प्रश्न ही पैदा नही होता। जब तक भी चला जाए, चलो। गति तीव्र करो, कुछ बल अर्जित करो, साधन जुटाओ, लेकिन जाओ। तो साधन जुटेंगे कैसे? ''**दीर्घकाल नैरन्तर्य सत्कारासेवितः**।'' उपासना करनी है तो लगातार करनी है, बीच में छोड़ना नहीं। प्रतिदिन करना है। तो प्रतिदिन क्या सारे समय करते रहें? इस मामले में आप मुसलमानों से अधिक भाग्यशाली हो।

ये लोग जब पहले गए थे नमाज करने तो २४ घन्टे में २४ नमाज थीं। उन्होंने कहा जी हम सोऐंगे कब? तो उन्होंने कहा ऐसा करो दो घन्टे में एक बार कर लो। तो उनको १२ नमाज कर दीं। बोले, १२ में भी तो रात कैसे बीतेगी। जागते ही बीतेगी। तो उन्होंने कहा चलो ५ कर लो। ५ के बाद जब गए तो उनको धमका दिया। बोले, इससे ज्यादा नहीं, वरना २४ करनी पड़ेंगी फिर। उन्होंने कहा ५ ही ठीक है। पौराणिक संध्या तीन समय करते हैं यह मुसलमानों से थोड़ी ही सुविधा में हैं, लेकिन आप बिल्कुल सुविधा में हैं। प्रतिदिन तो करना है परन्तु प्रातःकाल और सायंकाल करना है। प्रातःकाल और सायंकाल जो संध्या करने का समय है कई अर्थों से ठीक बैठता है। संधि से भी संध्या है, सम्यक् ध्यान से भी संध्या है। ध्यान का जो समय है वो भी वही हो सकता है। क्यों? यह कितनी विचित्र बात है कि उधर कार्यालय का काम चल रहा है और वह कपड़ा बिछा के नमाज पढ़ेगा, क्या मतलब है। क्या हवाई जहाज में उड़ते-उड़ते भी पढ़ेगा? फिर कॉकपिट में क्या करेगा, नमाज पढ़ेगा? रेलवे के इंजन में नमाज पढ़ेगा? या ट्रक चलाते नमाज पढ़ेगा? ऐसा तो नहीं होगा। हर कार्य का समय है, तो उपासना का सबसे अच्छा समय कौन सा हो सकता है?

जब भी आप व्यस्तताओं में होंगे तो आप उपासना नहीं कर सकते। उपासना का एक सीधा संबन्ध है-शान्ति, ठंडापन, शीतलता। तो शीतलता आपके शरीर में, मन में, बुद्धि में, वातावरण में कब होगी? जब कहीं जाना नहीं है, और कहीं आप गए नहीं हो या घर पर ही हो, तो दो ही परिस्थिति हैं, जो आपको सहज रख सकती हैं, शान्त रख सकती हैं, निश्चिन्त रख सकती हैं वो है- सुबह और शाम। नियम सामान्य होते हैं, विशेष में तो मना कभी भी नहीं है। आप कहो, जी मैं कब उपासना करूँ? कभी भी कर लो, जितना जब समय है, तब कर लो। उपासना प्रतिषिद्ध नहीं है। ऐसा नहीं है कि किसी दूसरे समय करोगे तो मान्य नहीं होगा। आपके पास सुविधा है, समय है, तो कितना भी करो। लेकिन हर व्यक्ति के लिए न्यूनतम कितना करना। आपको आश्चर्य होगा कि मनु महाराज ने इस संध्या करने का कितना महत्त्व बताया है। **ऋषयो दीर्घसंध्यत्वात् दीर्घम् आयु...ब्रह्मवर्चसमेव च।** आश्चर्य है, व्यायाम करने से बल बढ़ेगा-यह तो समझ में आता है। अच्छे भोजन से आयु बढ़ जायेगी, बल बढ़ेगा, स्वास्थ्य ठीक होगा ये भी समझ में आता है, लेकिन मनु महाराज तो ऐसा कहते हैं कि तुम संध्या करोगे तो तुम्हारी उम्र लम्बी होगी। और लम्बी होगी ही नहीं, वो कहते हैं कि लंबी आयु हुई है लोगों की। **ऋषयो दीर्घसंध्यत्वात् दीर्घमायुरवाप्नुवन्**- ऋषि लोग दीर्घजीवी क्यों होते थे? क्योंकि वे लंबे समय तक संध्या करते थे। अच्छा, लंबे समय तक संध्या कर कौन सकता है? जिसको जल्दी से गाड़ी पकड़नी है या जिसे हवाई अड्डे जाना है? कौन करेगा? वो करेगा, जिसे कहीं नहीं जाना। जो अपने आश्रम में बैठा है और जिसको कोई चिन्ता नहीं है, जिसको कोई जल्दी नहीं है, जिसको कहीं कोई परेशानी नहीं है, कोई उतावलापन नहीं है, वही तो देर तक बैठ पाएगा। नहीं तो कोई भी परिस्थिति ऐसी आई तो उसको भागने की लगती है। आचार्य उदयवीर जी के पास मैं कभी-कभी जाता था मुझे लगता था कि अब बहुत देर हो गयी, पंडित जी छोड़ नहीं रहे हैं, तो वो एक वाक्य का प्रयोग करते थे। बोले ''क्यूँ पर फड़फड़ा रहे हो'' तो जब हमारे मन में कहीं उत्सुकता, उत्कंठा, कोई परेशानी, कहीं जल्दी, कुछ होता है तो हम बैठ नहीं सकते और उपासना का नियम है कि बैठे बिना उपासना हो नहीं सकती। आप जितने निश्चिन्त होकर बैठ सकते हैं, उपासना उतनी अच्छी होगी। इसीलिए एक नियम है-

**शतं विहाय भोक्तव्यं सहस्रं स्नानम् आचरेत्।**
**लक्ष्यं विहाय दातव्यम् कोटिं त्यक्त्वा हरिं भजेत्।**

कामों की प्राथमिकता क्या होनी चाहिए-**शतं विहाय भोक्तव्यम्**- सौ काम हों और भोजन करना है तो सौ काम छोड़कर भोजन मुख्य है। **सहस्रं स्नानम् आचरेत्**-और

यदि स्नान भी करने की बात हो तो हजार काम छोड़ो पर स्नान कर लो। **लक्ष्यं विहाय दातव्यम्** किसी को कुछ देना है-कोई माँगने वाला आया है, किसी को कोई चीज लौटानी है तो पहले उस काम को करो और यदि परमेश्वर की उपासना का समय हो तो **कोटिं त्यक्त्वा हरिं भजेत्**- फिर करोड़ काम होंगे तो होंगे फिर कोई चिन्ता नहीं। उपासना का निश्चिन्तता से निश्चिन्तता का आयु से संबन्ध है। मतलब संध्या करने से कोई दीर्घजीवी कैसे हो सकता है, यह तो बहुत आसान है, यह बहुत स्पष्ट है, कैसे? जो आदमी दिन में दो बार तनाव-मुक्त हो जाता है, वो बीमार कैसे पड़ेगा, वो रोगी कैसे होगा। हम २४ घंटे तनाव से मुक्त नहीं हो पाते, अगले दिन फिर तनाव के लिए तैयार हो जाते हैं, रात को सोते-सोते भी हम तनाव में रहते हैं। हमारे साथ इतने कारण इतनी परेशानियाँ, इतनी समस्यायें हैं कि रात के समय भी हमारा मस्तिष्क व्यस्त रहता है और सवेरे उठते हैं तो व्यस्त मस्तिष्क के साथ उठते हैं, नई व्यस्तताओं में चले जाते हैं। और कभी भी तनाव यदि खत्म नहीं होगा तो क्या होगा? ज्यादा किसी चीज को खींचोगे तो क्या होगा? टूट जायेगा। हमारे ऋषि कहते हैं कि भले लोगो, तुमको यह शरीर दिया है, मस्तिष्क दिया है, इसमें नाड़ियाँ काम करने के लिए दी हैं, जब कुछ परिश्रम करते हो, काम करते हो, चिन्ता करते हो, तो नाड़ियों में, शिराओं में, धमनियों में, मस्तिष्क में सक्रियता के कारण थकान होती है, तनाव होता है, चिन्ता के कारण से उनमें हर समय असामान्यता होती है। उसका एक ही उपाय है-उपासना।

हमें मन्दिर जाने में भी कभी-कभी सुख लगता है, उसका कारण मन्दिर की मूर्ति नहीं है, काम से ध्यान का बँटना है। कभी-कभी आप पौराणिक आदमी से पूछो, तो वो बोलेगा कि मैं रोज मन्दिर जाता हूँ, मुझे बड़ा अच्छा लगता है। हाँ, मन्दिर जाकर उसे अच्छा क्यों लगता है कि थोड़े समय तक जो समस्यायें हैं वो इनसे अलग हो जाता है। यहाँ one way traffic है। जो कुछ करता है, भक्त ही करता है। भगवान् को तो कुछ करना नहीं होता। खिलाता है तो भक्त खिलाता है, भगवान् खाए या न खाए। खिलाने का काम तो उसको करना है, उसको नहलाने का काम करना है, भगवान् नहाए न नहाए। उसके सामने हाथ जोड़कर प्रार्थना करनी है, सुने या न सुने। मेरा तो मैंने कर लिया ना। उसने उसका किया नहीं किया ये वो जाने, लेकिन मैंने मेरा कर लिया। मैंने जो किया क्या वो निरर्थक जाएगा? उसका कुछ न कुछ तो परिणाम होगा। भाई उसने नहीं खाया पर मैंने खिलाया, तो खिलाने की सन्तुष्टि तो मुझे मिलती है। इसलिये जब उपासना में बैठते हैं, उपासना में जाते हैं तो सबसे बड़ा काम ये होता है कि मन और मस्तिष्क शान्त होता है।

अब एक और बात है कि कौन सी उपासना ठीक है। जो मुसलमान करते हैं, उठना, बैठना, खड़े होना, घुटने टिकाना, माथा रगड़ना- ये ठीक है? या पौराणिक भाई नाचते हैं, कूदते हैं, बजाते हैं, गाते हैं, ढोल-ढमाके करते हैं- वो ठीक है? तो कहता है '**धिया**'। '**धी:**' अर्थात् बुद्धि, अरे भाई ये बुद्धि से किया जाने वाला काम है। हाथ-पैरों से किया जाने वाला काम नहीं है। उपासना में तो उल्टा होता है, उपासना में उपकरण सिमटते हैं।

एक बार एक सज्जन थे, अजमेर में ही। वो कहने लगे कि ये तुम्हारा जो भगवान् है ना बिना हाथ पैर का, कैसा लगता होगा? मैंने कहा-लंगड़ा-लूला लगता होगा और कैसा लगता होगा। काणा, अन्धा, बहरा लगता होगा, तो बोले-फिर काम कैसे करता होगा? मैंने कहा-नहीं कर पाता होगा, बड़ी मुश्किल होती होगी। बोले-अच्छा फिर तुम निराकार क्यों मानते हो?-मैंने कहा-साकार मान लेंगे, हमें क्या परेशानी है, जैसा अच्छा हो वैसा मान लेंगे। फिर मैंने पूछा-जैन साहब, एक बात बताओ, आपके घर में कार-वार कुछ है? बोले, कार तो मेरे घर में छ: हैं। उससे कहाँ जाते हो? बोले-मुंबई, कलकत्ता, दिल्ली, मद्रास जाते हैं। मैंने कहा फिर? फिर वापस आ जाते हैं तो कार फिर कहाँ खड़ी करते हो? घर के बाहर। क्यों, कार है तो बेडरूम में कार से क्यों नहीं जाते? या बाथरूम में कार से क्यों नहीं जाते? बोले- कमाल है पंडित जी, कहीं बाथरूम में कार से जाया जाता है? मैंने कहा-क्यों नहीं जाना चाहिए? जब बाहर जाते हो तो यहाँ भी जाओ। बोले-नहीं वो दूर जाने के लिए है। तो मैंने कहा-जैन साहब, ये हाथ-पैर दूर जाने के लिये हैं। जब नजदीक जाना होता है तो जैसे कार

**शेष भाग पृष्ठ संख्या ३८ पर....**

# कुछ तड़प-कुछ झड़प

**प्रा. राजेन्द्र 'जिज्ञासु'**

**जन जागरण काल की प्रथम महिला सेविका**- दिल्ली से एक महिला प्राध्यापिका अपनी एक शोध परियोजना के लिये कुछ सहयोग व मार्गदर्शन लेने यहाँ आईं। वह पीएच.डी. तो पहले ही कर चुकी हैं। उनकी अगली परियोजना का विषय है 'जन-जागरण काल की प्रमुख महिलायें'। यहाँ आने से पूर्व ही उस देवी ने इस सेवक का कुछ साहित्य पढ़ रखा था। उसने अपने विषय की चर्चा छेड़कर अपनी जिज्ञासा इस लेखक के सामने रखकर कुछ पूछा तो हमने उसके प्रश्न का उत्तर देते हुये उससे एक प्रश्न पूछ लिया-

आधुनिक काल में वह भारतीय महिला कौन थी, जिसने उन्नीसवीं शताब्दी के भारत के जन-जागरण अभियान की एक प्रमुख घटना में आगे बढ़कर भाग लिया? यह प्रश्न ही उसके लिये नया था। किसी ने कभी इस प्रश्न को उठाया ही नहीं। वह क्या उत्तर देती? इसका उत्तर पाने के लिये उसने भी उत्सुकता दिखाई।

उसे बताया गया कि प्रथम डी.ए.वी. स्कूल की स्थापना के लिये अथवा डी.ए.वी. संस्थाओं के लिये जब लाहौर में पहला समारोह किया गया तो उसमें दैनिक ट्रिब्यून अंग्रेजी के सम्पादक का भी भाषण हुआ और भी कई तत्कालीन विचारकों ने, सुधारकों ने अपने विचार उस सभा में रखे, परन्तु उस सभा में एक ही महिला को अपने विचार रखने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। इस दृष्टि से यह घटना भारत में एक मील पत्थर का स्थान रखती है, परन्तु इस घटना ने इतिहासकारों का ध्यान नहीं खींचा। इसी सभा में महात्मा हंसराज जी ने संस्था के लिये आजीवन अवैतनिक कार्य करने की घोषणा की थी।

वह देवी कौन थी? आज डी.ए.वी. संस्थाओं में उसके नाम को कोई नहीं जानता। महात्मा हंसराज उसे ख़ूब जानते थे। वह उन्हीं के बजवाड़ा कस्बा के समीप हरियाणा में जन्मी थी। उसका नाम था माई भगवती। महात्मा जी के किसी लेख व भाषण में उस देवी का नामोल्लेख नहीं। महात्मा जी के किसी भी जीवनी लेखक ने इस तथ्य की चर्चा नहीं की। **महात्मा हंसराज ग्रन्थावली ही इसका एक अपवाद है।**

उस देवी के पश्चात् भी कई शोधकर्ताओं ने इस विनीत से जन-जागरण को आर्यसमाज की देन विषय में सम्पर्क किया तो माई जी की इस घटना को सुनकर अत्यन्त प्रभावित हुये। आर्य सामाजिक पत्रों में श्रीमती भगवती की सर्वाधिक चर्चा महात्मा मुंशीराम जी ने की है। कई कृपालु सज्जनों को इस घटना के महत्त्व का अनावरण अखरेगा। न जाने वे क्या-क्या लिखेंगे व कहेंगे। जहाँ-जहाँ भी इस तथ्य की चर्चा छेड़ी है प्रबुद्ध श्रोता झूम उठते हैं। हमारी सब ऋषिभक्तों से विनती है कि इतिहास ग्रन्थों में उस आर्य देवी को उसका समुचित स्थान दिलायें। 'वेदों में नारी' पर बोलने वाले इस तथ्य को भी उसमें जोड़ लेंगे तो कोई हानि नहीं होगी।

**एक देशभक्त मुसलमान साहित्यकार की भावना**- डॉ. अलिफ़ नाज़िम नाम के हमारे एक कृपालु देशभक्त मुसलमान भाई ने एक नया कीर्तिमान स्थापित किया है। आपने उर्दू साहित्य में देशभक्ति व समाज सुधारवाद का विषय देने वाले प्रथम महाकवि महाशय दुर्गासहाय जी सुरूर पर चार पुस्तकें प्रकाशित कर दी हैं। पाँचवीं भी शीघ्र आ जावेगी। आज तक उर्दू साहित्य के इतिहास लेखकों ने आर्यसमाजी सुरूर का प्रचण्ड बहिष्कार किये रखा। अलिफ़ नाज़िम की श्रीमान् जितेन्द्रकुमार जी गुप्त बठिण्डा से और इस लेखक से बहुत प्रीति है। हिन्दी साहित्य तथा आर्य सामाजिक साहित्य में सुरूर जी पर पहली पुस्तक 'हृदय की तड़पन' का हम विमोचन न करवा सके। यह आर्यसमाज का दुर्भाग्य है।

मान्य नाज़िम जी ने श्री जितेन्द्रकुमार जी को और इस विनीत को अपने विषय की इस पहली हिन्दी पुस्तक के विमोचन के लिये सहारनपुर आने का निमन्त्रण दिया है। **'इस प्रीत पै वारी, मैं मीत पै वारी, दिलजीत पै वारी।'**

हमारी पुस्तक में 'वेदवाणी' कविता आप ही ने खोजकर दी। पं. लेखराम जी के बलिदान पर रची सुरूर

जी की लम्बी ऐतिहासिक मुसद्दस भी वह दस दिन तक हमें पहुँचा देंगे। महर्षि दयानन्द जी पर सुरूर जी का तराना श्री जितेन्द्र जी उन्हें एक-दो दिन में भेज देंगे। हमने आर्य जाति के लाल 'सुरूर' जी पर अपनी दूसरी पुस्तक का कार्य आरम्भ कर दिया है।

'हृदय की तड़पन' पुस्तक के मुद्रण व साज-सज्जा को उत्तम बनाने में श्री प्रभाकर जी ने प्रशंसनीय सहयोग किया। 'सुरूर' जी को उनकी गरिमा के अनुरूप स्थान दिलाने में हमें पचास वर्ष से लगे थे। प्रिय श्री राहुल तथा आर्यसमाज मेरठ के सहयोग से हमारा यह यज्ञ सफल हो गया है। क्या आर्यसमाजी भी अपना कर्त्तव्य निभायेंगे?

**प्यार, सत्कार, उद्‌गार और आभार**-आर्यसमाज में दूर दक्षिण तक आबाल वृद्ध विशेष रूप से सुयोग्य युवकों से प्यार पाकर विनीत अपने भाग्य पर इतराता है। जीवन की साँझ में पद, प्रतिष्ठा और माला व माल की कतई भूख नहीं है। इस ऋषि मेले पर माननीय प्रियव्रत दास जी उडी़सा ने इस लेखक को अपनी निधि से सम्मानित करने के लिये चुना। अपने उद्‌गार व्यक्त करने के लिये शब्द नहीं मिल रहे। आभार किस-किस का व्यक्त करूँ। प्रात: ढाई बजे उठकर प्रणव जप, गायत्री जप व भ्रमण करने का नियम है। आचार्य श्री नन्दकिशोर जी को इसका पता है। हर आयु वर्ग के भाई-एक के पश्चात् दूसरा अपने-अपने प्रश्न लेकर और कुशल-क्षेम पूछने के लिये रोककर खड़े हो जाते हैं। उनकी भावनाओं का आदर मेरा कर्त्तव्य बनता है। पूज्य मीमांसक जी, मान्य तपेन्द्र जी, श्री सत्येन्द्र जी ने समय-समय पर प्रेरणा दी कि जो कुछ आपके पास ज्ञानराशि है-सब काम तजकर उसे देते जाओ। जीवन की साँझ में इसी काम में लगा हूँ। भाग-दौड़ का युग चला गया, परन्तु कार्य करते हुये लिखते-पढ़ते थकावट नहीं होती। अपवाद रूप में ही यात्रा करता हूँ। स्वामी श्रद्धानन्द जी की जीवन-यात्रा वाला ग्रन्थ कुछ मास में प्रकाशित हो जावेगा। अब इतने बड़े ग्रन्थों का सृजन नहीं करूँगा, परन्तु लेखनी चलती रहेगी। पारिश्रमिक की भी चिन्ता नहीं। देश के विभिन्न भागों के कर्मठ आर्यवीर तो साथ दे ही रहे थे, अब विदेश के आर्य भाई भी पं. लेखराम के मिशन के लिये साथ दे रहे हैं।

पैसे की भूख होती तो मैं भी डॉ. रामप्रकाश जी का सुझाव मानकर, राशि लेकर सारा पुस्तकालय व अलभ्य स्रोत उन्हें दे देता। अपने कार्य निपटाकर जहाँ-जहाँ पुस्तकालय पहुँचाना है, पहुँचाता जा रहा हूँ। पूर्वजों का ऋण चुकाने में जी जान से लगा हूँ। मित्र, प्रेमी-ऋषिभक्त लिखने के लिये नये-नये विषय सुझाते रहते हैं। जितना कर सकता हूँ करता जा रहा हूँ। संसार के सारे कार्य तो कोई भी निपटा नहीं सका। पं. लेखराम जी की परम्परा को अखण्ड रखने वाला कोई नहीं दिख रहा। स्वामी सत्यप्रकाश जी की यह टीस मुझे भी सताती है।

**एक अलभ्य शास्त्रार्थ**- एक अलभ्य शास्त्रार्थ पर एक कृपालु ने एक लम्बा लेख लिखकर अपने मन की भड़ास निकाली है। न जाने इस पुस्तक के छपने के इतने वर्ष पश्चात् उस कृपालु को इसका ध्यान कैसे आया। वह जो चाहें सो मानें व लिखें। वह पूज्य मीमांसक जी को कोसें अथवा मुझको। वह स्वतन्त्र हैं। मैं पाठकों की असहमति का अधिकार छीन नहीं सकता। मैंने उनके लेख के अन्त की एक पंक्ति पढ़कर बिना पढ़े उनका सारा लेख समझ लिया कि लाला साईंदास को ही इसका लेखक या सम्पादक मानना चाहिये।

परन्तु उस कृपालु का दुर्भाग्य यह कि लाला साईंदास ने स्वयं को इसका लेखक माना ही नहीं। अपने १३ वर्ष के सामाजिक जीवन में कहीं एक सैद्धान्तिक भाषण नहीं दिया, न एक पृष्ठ का लेख लिखा। जब महात्मा मुंशीराम जी ने जालन्धर में शास्त्रार्थ करने के लिये एक विद्वान् भेजने के लिये व्यक्ति भेजा तो न वह स्वयं आये और न ही व्यक्ति भेजा। उनका गुण प्रबन्ध-पटुता था। वह न तो लेखक थे और न इतने गम्भीर विद्वान्। यही उत्तर पहले कलकत्ता से छप गया था। क्या उसके लेखक भी लाला साईंदास थे? पं. युधिष्ठिर मीमांसक जी के प्रश्न को झुठलाया नहीं जा सकता कि तब इतना पाण्डित्यपूर्ण और गम्भीर उत्तर देने वाला आर्यसमाज में कोई था ही नहीं। आर्यसमाज के प्रथम वेदज्ञ पं. आर्यमुनि जी थे। आप तब कार्यक्षेत्र में उतरे ही नहीं थे।

पूज्य मीमांसक जी ने यह नहीं कहा था कि यह उत्तर ऋषि ने लिखा। उनका मत था कि यह उत्तर किसी ने

महर्षि से पूछ-पूछ कर लिखा। मैं यही लिखता व बताता रहा। यदि मेरे किसी वाक्य से कृपालु जी को ऐसा भ्रम हुआ है तो मुझे इस के लिये खेद है। ला. साईंदास जी पर पूज्य स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज तथा पं. विष्णुदत्त जी के लेख ही पठनीय, प्रामाणिक व जानकारी का स्रोत हैं। दोनों ने इसका (एक आर्य के उत्तर) लेखक ला. साईंदास को नहीं बताया। उनको वेद, उपनिषद्, व्याकरण, स्मृतियों का ज्ञान कहाँ से प्राप्त हो गया? मीमांसक जी के इस कथन का कृपालु जी को उत्तर सूझा हो तो वह बताते रहें। मेहता जैमिनी जी, स्वामी वेदानन्द जी से जी खोलकर मैं शंका समाधान करता रहा। मेहता जी ने लाला साईंदास जी के दर्शन किये थे। मेहता जी ज्ञान का भण्डार थे। आपने 'रसाला एक आर्य' का लेखक लाला जी को न कभी कहा और न लिखा। किसी भी वैदिक विद्वान् ने लाला साईंदास के सैद्धान्तिक ज्ञान और ऐसी अनूठी विद्वत्ता की चर्चा की ही नहीं, न किसी पौराणिक ने उनके लिये कभी एक शब्द लिखा और कहा।

पं. लेखराम जी ने इस उत्तर की जानकारी का स्रोत नहीं लिखा तो इसमें आश्चर्य ही क्या? ला. साईंदास लेखक होते तो सम्भव है कि उनका नामोल्लेख वे कर देते। ऋषि के सारे शास्त्रार्थ क्या उनके द्वारा लिखे या हस्ताक्षरित थे? जालन्धर का एक शास्त्रार्थ न तो ऋषि का लिखा और न ही किसी आर्य द्वारा लिखित है। कृपालु जी उसे शास्त्रार्थ संग्रह से निकलवाने का अभियान छेड़ेंगे क्या? ऋषि के शास्त्रार्थ संग्रह में, जो बहालगढ़ से छपा है, उसमें एक सम्पादक जी ने कई अशुद्धियाँ की हैं। ईसाइयों की एक पुस्तक का नाम ही गड़बड़युक्त है। मुसलमानों के एक मौलवी का नाम मनगढ़न्त है। कृपालु जी इस पर मौन तोड़ें तो अच्छा है। चलो, बासी कढ़ी में उबाल आया है। हमारी सहानुभूति कृपालु जी के साथ है। बौद्धिक व्यायाम के लिये बधाई हो।

**एक अनुभवी विद्वान् का प्रश्न और सुझाव**- इस बार ऋषि मेला पर प्रातःकाल चार बजे गायत्री जप तथा भ्रमण करते हुये कानपुर से पधारे एक माननीय विद्वान् तथा अनुभवी प्राकृतिक चिकित्सा करने वाले महात्मा जी ने बड़े प्रेम से मुझसे एक प्रश्न पूछा, ''आपकी दीर्घायु, स्वास्थ्य, शरीर की फुर्ती तथा वाणी के ओज का क्या रहस्य है?''

मैंने कहा कि इस सब बातों का एक ही वाक्य में यह उत्तर दिया करता हूँ-''वैदिक विचारधारा और आर्य सामाजिक जीवन शैली।'' सबसे पहले बैंगलूर की एक सभा में डेक्कन हैरल्ड के एक सम्पादक ने सानुरोध यह प्रश्न पूछा था कि आपकी असाधारण स्मृति और फुर्ती का रहस्य क्या है? क्या आप कोई औषधि या टॉनिक लेते हैं? उन्हें भी यही उत्तर दिया था कि आर्योचित खानपान तथा प्रातः जागरण आदि आर्य जीवन शैली। पूज्य मेहता जैमिनी जी ने ऐसे ही प्रश्नों का उत्तर देने के लिये सत्तर की आयु पार करते हुये एक पुस्तक लिख दी थी। स्वास्थ्य व खानपान पर उनके व्याख्यानों को श्रोता मन्त्रमुग्ध होकर सुना करते थे।

कानपुर वाले माननीय महात्मा जी ने सानुरोध कहा कि आप इस विषय पर (दीर्घायु, स्वास्थ्य व फुर्ती) एक ज्ञानवर्द्धक पुस्तक में अपने अनुभवों तथा स्वाध्याय का निचोड़ दे देवें। मैंने उनके आदेश को शिरोधार्य किया। फिर कहता हूँ कि मुझमें किसी को भी जो ग्रहण करने व सीखने को अच्छी बात लगती है वे सब आर्यसमाज की शिक्षा का फल है। गुरुद्वारा सिगरेट केस की अमानवीय यातनायें सहकर भी मरा नहीं-बचकर आ गया तो यह आर्यसामाजिक महापुरुषों से प्राप्त संस्कारों का फल है। तीन वर्ष पूर्व सिर पर पत्थर मारा गया। तेरह टांके लगे। डॉक्टर पूछते थे, ''क्या दर्द नहीं होता? दिल नहीं घबराता? क्या जल लायें? मेरा एक ही उत्तर था कि चिन्ता न करो। मेरे संस्कार ही ऐसे हैं। हम आर्यसमाज के रंग में स्वयं को रंग लें तो कुछ मिलेगा।''

**मान्य पथिक जी का कथन**- किसी भाई ने मेरे ग्रन्थों में पढ़ा कि स्वामी अच्युतानन्द जी का ऋषि से कोई शास्त्रार्थ नहीं हुआ। यह कहानी मनगढ़न्त है। उस भाई ने पथिक जी से मेरे कथन की चर्चा कर दी। पथिक जी ने पं. चमूपति जी के लेख का प्रमाण देकर कहा कि वे लिखते हैं कि शास्त्रार्थ हुआ। मेरा निवेदन है कि भावुक हृदय चमूपति जी ने यह कहानी सुनकर इसे सच मान लिया था। वे भ्रमित हो गये।

१. स्वामी अच्युतानन्द जी ने ऋषि से सम्बन्धित अपने संस्मरणों को दो लेखों में लेखबद्ध करके 'आर्यमित्र' के जन्म शताब्दी अंक में सन् १९२५ में प्रकाशित करवाया। यही दो लेख श्री महाशय कृष्ण जी ने ऋषि पर अपनी एक इकलौती पुस्तक में दिये। इनमें स्पष्ट लिखा है कि जीव-ब्रह्म जैसे गम्भीर विषयों पर मेरी शंकाओं का समाधान करते हुये ऋषि जी ने कहा, ''तुम अभी बालक हो आगे, चलकर ये बातें समझ में आ जायेंगी।'' वहाँ किसी भी शास्त्रार्थ की कोई चर्चा नहीं।

२. स्वामी अच्युतानन्द ऋषि की पाठशाला में काशी में पढ़ते रहे-ऐसा महात्मा जवाहरदास बताते थे। यह प्रमाण मैंने ऋषि जीवन में दिया है। क्या ऋषि ने अपनी पाठशाला के एक विद्यार्थी से शास्त्रार्थ किया? यह बात क्या जँचने वाली है?

३. स्वामी अच्युतानन्द जी के निधन पर उनके साथी-संगी पूज्य स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज के पठनीय लेख में ऋषि जी से शास्त्रार्थ की कोई चर्चा नहीं है।

४. ऋषि के शास्त्रार्थों की किसी भी सूची व संग्रह में इसका कोई संकेत नहीं मिलता।

५. स्वामी अच्युतानन्द जी पंजाब से सम्बन्धित महात्मा थे। पंजाब के एक भी जीवनी लेखक ने स्वामी अच्युतानन्द जी के साथ शास्त्रार्थ की कोई घटना नहीं लिखी।

तथ्य व प्रमाण हमने दे दिये। इतिहास प्रदूषण के महारोग का क्या इलाज किया जावे?

**स्वामी श्रद्धानन्द जीवन-यात्रा**- स्वामी श्रद्धानन्द जी पर विश्व के अब तक के सबसे बड़े ग्रन्थ की प्रकाशन प्रक्रिया आरम्भ हो चुकी है। माननीय श्री रमेश जी मल्होत्रा की प्रेरणा से इसका नाम हमने बदलकर 'स्वामी श्रद्धानन्द जीवन-यात्रा' कर दिया है। इसके प्रकाशन व प्रसार में अमरीका से श्री रमेश मल्हन जी ने आगे बढ़कर लेखराम नगर कादियाँ का नाम उज्ज्वल कर दिया है। पंजाब में अब आर्यसमाज का कोई नेता नहीं, कोई संगठन नहीं और कोई संन्यासी महात्मा और कोई पं. शान्ति प्रकाश नहीं। रमेश जी ने कुछ तो लाज रख ली। हमने स्वर्गीय क्षितीश कुमार जी की चाहना को पूरा कर दिया। हमें पहली बार ऐसी पर्याप्त अलभ्य सामग्री मिलेगी जो इससे पहले कभी प्रकाश में आई ही नहीं। आर्यसमाज के पुराने पत्रों, 'सद्धर्म प्रचारक' के अंकों तथा दुर्लभ, अप्राप्य साहित्य का जी भरकर इसमें लाभ उठाया गया है। जो घटनायें पाठकों ने, विद्वानों ने कभी सुनी-पढ़ी ही नहीं-वे सप्रमाण इस ग्रन्थ में दी गई हैं। चित्र भी बहुत होंगे।

अब कोई बहुत बड़ा ग्रन्थ लिखने का अपना विचार नहीं है, परन्तु लेखनी चलती रहेगी। इसके पश्चात् हैदराबाद के मुक्ति संग्राम पर अमरीका के आर्यवीर रणजीत जी तथा हैदराबाद के कुछ आर्यवीरों की सत्प्रेरणा से हमने अपने नये ग्रन्थ का लेखन कार्य आरम्भ कर दिया है। इसकी पृष्ठभूमि देते हुये आर्यसमाज की उपेक्षा करने वाले तथा भारतद्वेषी आर्यसमाज के विरोधियों के रक्तरंजित इतिहास को आने वाली पीढ़ियों के लिये लिखा जा रहा है। पूज्य पं. नरेन्द्र जी के पश्चात् यह सबसे बड़ा, खोजपूर्ण व मौलिक ग्रन्थ होगा। नये-नये प्रमाण पढ़कर आर्यजन झूम उठेंगे। आर्यो! हैदराबाद की प्रजा के राजनीतिक अधिकारों की माँग एक विशाल सम्मेलन में रखने वाला साहसी हैदराबादी नेता-एक निडर आर्यपुरुष ही था। उसका नाम पहली बार इसी ग्रन्थ में उजागर किया जायेगा।

## अतिथि-यज्ञ के होताओं से अनुरोध

अतिथि-यज्ञ के होताओं से उनकी वैवाहिक वर्षगाँठ अथवा जन्मदिन व विभिन्न अवसरों पर ५१०० रु. प्रतिवर्ष सभा को प्राप्त होते रहते हैं। जो महानुभाव संकल्प के साथ इस पुनीत कार्य से जुड़े हुए हैं, उनसे हमारा अनुरोध है कि वे अपनी राशि भेजते समय **जन्मतिथि/वैवाहिक वर्षगाँठ आदि व दूरभाष संख्या** सूचित करना न भूलें। साथ ही यह भी अवश्य सूचित करा देवें कि पहले से भिजवा रहे हैं अथवा नया शुरू किया है। आप अपनी राशि सभा के बैंक खाते में नकद अथवा चैक द्वारा जमा करा सकते हैं।

ऐतिहासिक कलम....

# वेद ईश्वरीय ज्ञान क्यों?

**आचार्य उदयवीर शास्त्री**

आर्यसमाज के क्षेत्र में यह विषय बहुत घिसा-पिटा है, पर यहाँ एक नये दृष्टिकोण से विचार किया गया है। इस लेख में न कोई वेद का प्रमाण दिया गया है, न किसी अन्य शास्त्र का और न किसी ऋषि की उक्ति का निर्देश है, फिर भी पाठक को इसमें कुछ प्रेरणाप्रद तत्त्व मिलेगा।

पिछले दिनों कार्यवश मेरठ जाना हुआ। मेरे मित्र श्री पं. सोमाहुति भार्गव ने मुझे वहाँ के एक वयोवृद्ध विधि-विशेषज्ञ (एडवोकेट) श्री रघुनाथ प्रसाद गोयल से मेरा परिचय कराया। इतने विद्वान् होते हुए भी उनके विनीत स्वभाव और सत्कार भावना ने मुझे मुग्ध कर दिया।

जिस प्रयोजन से भार्गव जी ने मेरा परिचय कराया, वह प्रसंग सामने आया, गोयल जी के कुछ अपने विचार हैं, प्रत्येक विचारशील व्यक्ति की यह अवस्था होती है। तब मेरे पास इतना अवकाश नहीं था कि उनसे इच्छानुसार वार्त्तालाप कर सकता। मैंने उनसे निवेदन किया, आप अपने विचार लिखकर भेज दें, मति अनुसार उस विषय में कहूँगा। अभी पिछले दिनों श्री गोयल जी ने अपने विचार भेजे हैं। उसमें कुछ अंश टाइप किया हुआ है, कुछ हाथ से लिखा है। उसके आधार पर आगे शंका समाधान के रूप में इस विषय पर अपने भाव मैंने प्रकट किये हैं। शंका के रूप में उन्हीं शब्दों को रखने का प्रयत्न किया है, जो श्री गोयल जी ने प्रयुक्त किये हैं।

**शंका**

**'वेद ईश्वरकृत हैं या ईश्वर का दिया हुआ ज्ञान है' की आलोचना** मनुष्य को पूर्णरूप से जाने बगैर कोई विचार ठीक-ठीक समझ में नहीं आता और न आ सकता है क्योंकि यह मनुष्य ही तो है जो विचारशील है, तो प्रथम मनुष्य क्या है यह जानना आवश्यक है।

देखने से यह प्रतीत होता है कि शरीर और एक शक्ति के सम्बन्ध से जो वस्तु या व्यक्ति बनता है वह मनुष्य कहाता है। इस समय हमें सिर्फ उसी शरीर और शक्ति पर ध्यान देना है, जो मनुष्य को उत्पन्न करता है और प्राणियों का यहाँ वृत्तान्त नहीं है।

मनुष्य पैदा होता है और उसी समय एक ध्वनि करता है। वह माता के स्तन से दूध पीने लगता है, वह मल-मूत्र करता है और भी क्रियायें करता देखा जाता है। ये सब क्रियायें उसको किसी ने नहीं बताई हैं, यानी उसमें स्वाभाविक हैं। इस तरह ज्यों-ज्यों वह बढ़ता जाता है तब उसमें और बहुत से लक्षण पाये जाते हैं। उसी में ज्ञान भी है। इसी कारण बहुत विद्वानों ने या ऋषियों ने या योगियों ने कहा है और गौर करने पर अब भी प्रतीत होता है कि मनुष्य में ६ लक्षण हैं, वह हैं-सुख, दु:ख, राग, द्वेष, ज्ञान, प्रयत्न।

यहाँ हमें ज्ञान को समझना है कि यह उसको कोई देता है या उसका यानी मनुष्य का स्वाभाविक गुण है। मनुष्य सृष्टि का अंग है और सृष्टि हमेशा होती आई है, यानी सृष्टि का होना अनिवार्य है, यानी अनादि है।

मनुष्य अपनी इन्द्रियों से ज्ञान प्राप्त करता है इसी कारण मनुष्य में ज्ञान इन्द्रियाँ कही जाती हैं, परन्तु एक और मन या अन्त:करण जिसका नाम बुद्धि है, वह भी मनुष्य में है। इन सबकी मदद से मनुष्य अपने लिये जो उसे लाभदायक प्रतीत होता है, कार्यप्रणाली बना लेता है। यानी ज्ञान वह है जिससे वह बाह्य पदार्थ से अपने को लाभ पहुँचाने की रीति निकालता है और अपने विचार बनाता है।

अब जब हम यह देखते हैं कि मनुष्य में ज्ञान स्वाभाविक है और उसमें प्रयत्न भी है, जिससे ज्ञान बढ़ सकता है तो किसी अन्य प्रकार से ज्ञान ग्रहण करके अपने विचार बनाने की क्या आवश्यकता है। यानी ईश्वर को मनुष्य को ज्ञान देने का क्या अवसर है, यानी यह मानना कि ईश्वर ने मनुष्य को आदि सृष्टि में ज्ञान दिया, किसी तर्क से ठीक प्रतीत नहीं होता।

मेरे विचार में इस बात को मानने से कि वेद ईश्वरकृत ज्ञान है, मनुष्य मात्र की बड़ी हानि हुई है और हो रही है, जिस भ्रान्ति का मिटाना मनुष्य का कर्त्तव्य है और इसी

कारण यह प्रार्थनापत्र आप जैसे विद्वानों की सेवा में भेजा जाता है कि इस पर अपने विचार जनता के सम्मुख रखें ताकि वेदों की महिमा और बढ़े, यदि विचार गलत है तो उनको सही रास्ते पर आने का अवसर प्राप्त हो।

मेरा अनुभव यह है कि हर एक व्यक्ति जो जिस धर्म का अनुयायी है, वह अपने धर्म को सबसे अच्छा मानता है और अन्य प्रकार के विचार वालों की बातें सुनना या उन पर विचार करना भी अपनी बे-इज्जती समझता है, परन्तु प्रायः आर्य विद्वानों व आर्य धर्म के अनुयायियों को यह कहते सुना है कि हम तो केवल जो बात बुद्धि के अनुकूल होती है वही मानते हैं, इसी कारण इस पत्र को उन सज्जनों की सेवा में प्रस्तुत करता हूँ और आशा करता हूँ कि वे इस पत्र व इसका उत्तर किसी अखबार में छपवा दें ताकि मुझ जैसे व्यक्तियों को ठीक रास्ते पर आने का अवसर प्राप्त हो।

(श्री गोयल जी के पत्र की अविकल प्रतिलिप, टाइप किया भाग)

श्रीमान् जी! मेरी आपकी जो वार्त्तालाप हुई थी और मेरी शंका को निवारण करने का आपने वायदा किया था उस कारण यह पत्र भेजता हूँ कि जिसका उत्तर देने की कृपा करें। मेरा विचार है कि यदि मनुष्य या कोई विद्वान् मनुष्य की परिभाषा कर ले और ज्ञान की भी, तो उसका फल यही हो सकता है कि वेद मनुष्यों के विचारों की पुस्तक है, न कि परमात्मा का दिया हुआ ज्ञान है। मनुष्य को जो वेदों के काल में अपनी आवश्यकता के अनुसार कुछ विचार उत्पन्न हुए वह लिख दिये या बना लिये। मनुष्य को जिससे कोई लाभ होता है वह उसकी पूजा करता है, परन्तु ईश्वर से तो कोई लाभ न होता है और न हो सकता है। वह तो मान लिया गया है कि कोई ऐसी वस्तु अवश्य होनी चाहिये। ऐसा मानने में कोई बुद्धि का काम नहीं है, परन्तु बुद्धि स्वाभाविक है और मनुष्य अनादि है, क्योंकि मनुष्य न हो तो सृष्टि का विचार कौन कर सकता है और बगैर मनुष्य के सृष्टि ही नहीं। क्योंकि सृष्टि अनादि है, या सृष्टिक्रम अनादि है तो ईश्वर को सृष्टि के बनाने या न बनाने में कोई अधिकार ही नहीं, तो मनुष्य जो सृष्टि का अंग है जैसा और जहाँ तक उसका मस्तिष्क जिस काल में ले जाता है वही विचार बना लेता है, इस कारण वेद ईश्वरकृत नहीं हो सकते।

**शंका**-वेद ईश्वर का दिया हुआ ज्ञान है, इस बात को समझने के लिये यह जानना आवश्यक है कि यह ज्ञान किसके लिये दिया गया है?

**समाधान**-यह ज्ञान मनुष्य मात्र के लिये दिया गया है। सब मनुष्य इसके अधिकारी हैं, मनुष्य से अतिरिक्त अन्य प्राणियों के लिये यह ज्ञान नहीं है।

**शंका**-यह ज्ञान कब दिया गया?

**समाधान**-इस विषय के जानकारों का कहना है कि सृष्टि रचना होने के अनन्तर जब सर्वप्रथम मानव का प्रादुर्भाव हुआ, उसी समय विशिष्ट मानवों के मस्तिष्क में किसी दिव्य अलौकिक अचिन्त्य शक्ति के द्वारा उस ज्ञान का उद्भावन किया गया।

**शंका**-यदि वह ज्ञान मनुष्य मात्र के लिये दिया गया तो पहिले यह जानना होगा कि मनुष्य क्या है और उसके लिये ज्ञान की आवश्यकता भी है, या नहीं?

**समाधान**-आपका कहना ठीक है, पर इस विषय में आपका अपना विचार क्या है?

**शंका**-हमारे विचार में तो देखने से यह प्रतीत होता है कि शरीर और एक शक्ति के सम्बन्ध से जो वस्तु या व्यक्ति बनता है, वह मनुष्य कहाता है। इस समय हमें सिर्फ उसी शरीर और शक्ति पर ध्यान देना है, जो मनुष्य को उत्पन्न करता है और प्राणियों का यहाँ वृत्तान्त नहीं है।

**समाधान**-यह पहले ही कहा गया है कि वेद-ज्ञान मनुष्य मात्र के लिये है, अन्य प्राणियों के लिये नहीं। संभवतः इसी कारण आप मनुष्य पर ध्यान देने को कह रहे हैं। मनुष्य कहे जाने वाले देह के साथ जब एक शक्ति का सम्बन्ध होता है, वह मनुष्य है, यही आप का मनुष्य से अभिप्राय है तो इसे ईश्वर द्वारा सृष्टि के आदि में ज्ञान दिये जाने के लिये आप क्या कहते हैं?

**शंका**-हमारा कहना है कि मनुष्य जब पैदा होता है उसी समय एक ध्वनि करता है, वह माता के स्तन से दूध पीने लगता है, वह मल-मूत्र करता है तथा अन्य क्रियाएं करता देखा जाता है। ये सब क्रियाएँ उसको किसी ने नहीं बताई हैं, यानी ये उसमें स्वाभाविक हैं। इस तरह ज्यों-ज्यों वह बढ़ता जाता है, उसमें और बहुत से लक्षण पाये जाते

हैं, उन्हीं में ज्ञान भी है। इसी कारण ऋषियों ने कहा है, और गौर करने पर अब भी प्रतीत होता है कि मनुष्य में छः लक्षण हैं-सुख, दुःख, राग, द्वेष, ज्ञान, प्रयत्न।

**समाधान**-आपके कहने का तात्पर्य यह प्रतीत होता है, कि इस मनुष्य देह के साथ जिस शक्ति का सम्बन्ध आपने बतलाया, वह शक्ति वही है, जिसको ऋषियों ने जीवात्मा कहा है। ज्ञान, प्रयत्न आदि लक्षण उसी के बताये गये हैं। फलतः एक विशेष प्रकार के देह के साथ जीवात्मा का सम्बन्ध होना 'मनुष्य' का स्वरूप है। जब बालक के रूप में यह प्रादुर्भूत होता है, उस समय की इसकी क्रियाओं व चेष्टाओं को आपने स्वाभाविक कहा है, क्योंकि उसे यह सब किसी ने बताया नहीं है।

यहाँ यह ध्यान रखना चाहिये कि ऐसी क्रियायें सभी प्राणियों में समान रूप से होती हैं, मनुष्य की यह कोई विशेषता नहीं है। आपने इन्हें स्वाभाविक इसलिये कहा कि इस देह का प्रादुर्भाव होने पर उसे यह किसी ने सिखाया नहीं। जिन ऋषियों ने जीवात्मा के अस्तित्व, उसके स्वरूप का निर्णय कर उसे समझाया है, उनका कहना है कि नवजात बालक की ये क्रियाएं पूर्वजन्म के संस्कार के कारण होती हैं, जो प्राणीमात्र के लिये साधारण हैं। इन क्रियाओं से मनुष्य की कोई विशेषता प्रकट नहीं होती। आहार, निद्रा, भय आदि सम्बन्धी सब क्रियायें प्राणियों में पूर्व संस्कारवश नवजात बालक में हुआ करती हैं, इन्हें किसी से सीखने की आवश्यकता नहीं होती, आप इन्हें स्वाभाविक बताकर ईश्वरीय ज्ञान के विषय में क्या कहना चाहते हैं?

**शंका**-यहाँ हमें 'ज्ञान' को समझना है कि यह मनुष्य को कोई देता है या उसका स्वाभाविक गुण है। मनुष्य सृष्टि का एक अंग है और सृष्टि अनादि है। मनुष्य पाँच ज्ञानेन्द्रियों से ज्ञान प्राप्त करता है। एक अन्तःकरण, मन या बुद्धि है। इन सबकी सहायता से मनुष्य अपने लिये जो उसे लाभदायक प्रतीत है कार्यप्रणाली बना लेता है, यानी 'ज्ञान' वह है जिससे मनुष्य बाह्य पदार्थ से अपने को लाभ पहुँचाने की रीति निकालता है और अपने विचार बनाता है।

हम देखते हैं कि मनुष्य में ज्ञान स्वाभाविक है और उसमें प्रयत्न भी है, जिससे ज्ञान बढ़ सकता है, तो किसी अन्य प्रकार से ज्ञान ग्रहण करके अपने विचार बनाने की क्या आवश्यकता है, ईश्वर को मनुष्य के लिये ज्ञान देने का अवसर है? यानी यह मानना कि ईश्वर ने मनुष्य के लिये आदि सृष्टि में ज्ञान दिया, किसी तर्क से ठीक प्रतीत नहीं होता।

**समाधान**-'ज्ञान' जीवात्मा की एक विशेषता है या उसका स्वरूप है, ऐसी हालत में हम कह सकते हैं, कि यह उसका स्वाभाविक रूप है। पर जीवात्मा स्वभावतः अल्पज्ञान और अल्पशक्ति होता है, यद्यपि प्रयत्न उसमें है, पर वह केवल अपने प्रयत्न से अपने ज्ञान-विषय को बढ़ा नहीं सकता। उसे इस कार्य के लिये बाहर के सहयोग की सदा अपेक्षा रहती है। आदि सृष्टि के विषय में विचार को एक ओर रखिये, वर्त्तमान सृष्टि में भी कोई बालक स्वतः ज्ञान-वृद्धि नहीं कर सकता, उसके लिये माता, पिता, आचार्य, गुरु एवं अन्य जानकार अनुभवी व्यक्तियों की अपेक्षा रहती है। उपदेश द्वारा ज्ञान बढ़ाने की यह परम्परा आदि सृष्टि से चली आ रही है। इस बात की एक से अधिक बार परीक्षा की गई है, कि एक नवजात बालक को बिना उसके साथ बोले और उसको कुछ सिखाये बिना अलग एकान्त में रखा गया, उसकी यथोचित शारीरिक पुष्टि के लिये आहार आदि का पूरा प्रबन्ध रखा गया है। उसकी ऐसी उम्र तक यह व्यवस्था रखी गई, जैसी उम्र तक माता, पिता, गुरु आदि या अन्य पारिवारिक जनों के सहयोग से सीखने वाला बालक संसार के सभी साधारण व्यवहारों को प्रायः सीख लेता है और भाषा आदि के द्वारा अपने सब भावों को प्रकट कर सकता है। एकान्त में रखा गया बालक यह सब कुछ नहीं जान सका, शरीर से सब प्रकार पुष्ट होने पर भी वह स्वतः ज्ञान वृद्धि करना तो अलग रहा, अपने आवश्यक उचित आहार आदि को भी समझ लेने में असमर्थ रहता है।

**शेष भाग अगले अंक में....**

---

विद्वान् स्त्रियों को योग्य है कि अच्छी परीक्षा किए हुए पदार्थ को जैसे आप खायें वैसे ही अपने पति को भी खिलावें कि जिससे बुद्धि, बल और विद्या की वृद्धि हो और धनादि पदार्थों को भी बढ़ाती रहें।

**-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.४२**

## परोपकारी के सुधी पाठकों के लिए आवश्यक सूचना

परोपकारी शुल्क भेजते समय नये या पुराने ग्राहक के उल्लेख के साथ-साथ ग्राहक संख्या अवश्य लिखें, अन्यथा शुल्क जमा करने में कठिनाई आती है। फलस्वरूप पाठकों के पास पत्रिका नहीं पहुँच पाती है। ऐसे ही अपना नाम हटवाते व जुड़वाते समय दूरभाष संख्या सहित अपना पूरा विवरण लिखकर भेजें। ई.एम.ओ. के द्वारा शुल्क भेजने वाले ग्राहक भी सन्देश के साथ अपनी ग्राहक संख्या सहित पूरा विवरण भेजें। **परोपकारी पत्रिका कार्यालय से निरन्तर भेजी जाती है, फिर भी जिन लोगों के पास पत्रिका का कोई अंक प्राप्त ना हुआ हो तो कृपया पत्र या दूरभाष द्वारा हमें सूचित करें, ताकि हम वह अंक पुनः भेज सकें, साथ ही अपने डाकघर में इसकी जाँच आदि भी करें।**

## धनराशि भेजने हेतु सूचना

परोपकारिणी सभा महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वारा स्थापित सभा है एवं उनके कार्यों को आगे बढ़ाने के लिय कृत-संकल्प है। सभा द्वारा ऋषि के स्वनानुरूप गुरुकुल, संन्यास एवं वानप्रस्थाश्रम, ध्यान शिविर, वैदिक साहित्य का प्रकाशन, देश में प्रचार, परोपकारी पत्रिका के माध्यम से जन-जागरण, भव्य अतिथिशाला, भोजनशाला आदि अनेक प्रकल्पों का संचालन हो रहा है। ये सभी कार्य आर्यजनों के सात्विक दान से ही होते हैं। अतः दानी महानुभावों से निवेदन है कि वेद, ईश्वर, दयानन्द के इस कार्य में अपना सहयोग अवश्य प्रदान करें।

चैक, ड्राफ्ट, धनादेश (मनीआर्डर) द्वारा राशि भेजने वाले उन पर '**परोपकारिणी सभा**' अवश्य लिख दें। दानी महानुभाव ऑनलाइन भी राशि जमा करवा सकते हैं। भारतीय स्टेट बैंक में एक सहस्र तक की राशि जमा कराने वाले **२५ रु. बैंक सेवा शुल्क के रूप में अतिरिक्त** जमा करवाने की कृपा करें। कृपया, राशि निम्नांकित बैंकों में ऑनलाइन भिजवाकर, जमा कराई गई स्लिप के साथ उद्देश्य लिखकर सभा कार्यालय को सूचित करवाने का कष्ट करें।

**खाताधारक का नाम - परोपकारिणी सभा, अजमेर (PAROPKARINI SABHA AJMER)**

**१. बैंक बचत खाता (Savings) संख्या-091104000057530 बैंक का नाम-आई.डी.बी.आई. बैंक, पावर हाउस के सामने, जयपुर रोड, अजमेर।**
**IFSC - IBKL0000091**

**२. बैंक बचत खाता (Savings) संख्या - 10158172715 बैंक का नाम - भारतीय स्टेट बैंक, डिग्गी बाजार, अजमेर।**
**IFSC - SBIN0007959**

जैसे वेद के वेत्ता विद्वान् लोग वेदानुकूल मार्ग से परमेश्वर को जानकर उत्तम ज्ञान से उसका सेवन करते हैं, वैसे ही जगदीश्वर सब को उपासनीय अर्थात् सेवन करने के योग्य है, वैसे ज्ञान के विना ईश्वर की उपासना कभी नहीं हो सकती क्योंकि विज्ञान ही उसकी अवधि है।

**- महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.४१**

# वैचारिक क्रान्ति के लिए सत्यार्थ प्रकाश पढ़ें।

# प्राणोपासना-४

तपेन्द्र

**युञ्जन्ति ब्रध्नमरुषं चरन्तं परितस्थुषः। रोचन्ते रोचना दिवि।।** ऋग्वेद १.६.१ का अर्थ करते हुए महर्षि दयानन्द जी महाराज लिखते हैं, ''सब पदार्थों की मुख्य सिद्धि का हेतु जो प्राण है उसको प्राणायाम की रीति से अत्यन्त प्रीति के साथ परमात्मा में युक्त करते हैं। इसी कारण वे लोग मोक्ष को प्राप्त होके सदा आनन्द में रहते हैं।'' प्राण, प्राण-नाड़ियाँ तथा हृदय के बारे में प्राणोपासना प्रथम[१] में उल्लेख किया गया था कि प्राण अचेतन ऊर्जा है, बाह्य प्राण सूर्य से तथा अन्तः प्राण भुक्त जल से प्राप्त होते हैं। हृदय प्राण का केन्द्र है, प्राणों में आत्मा प्रतिष्ठित है तथा परमात्मा हृदयाकाश में रहने वाले जीवात्मा के मध्य रहता है। प्राणों में उपासना करके आत्मा तथा परमात्मा का साक्षात्कार/दर्शन किया जा सकता है। प्राणोपासना-२ में श्वास-प्रश्वास एवं प्राण, प्राण के पाँच भेद, प्राणों की स्थिति तथा कार्य के विषय में विचार किया गया था। प्राणोपासना-३ में उदान प्राण के सम्बन्ध में विमर्श किया गया था कि प्राणायाम विद्या का इष्ट फल उदान प्राण की पिण्ड में स्थिरता का होना है। यह उदान प्राण ही मन रूपी यजमान को नित्यप्रति ब्रह्म से सम्बन्ध करा देता है। उदान प्राण स्थिर होने पर आत्म दर्शन/परमात्म दर्शन होते हैं।

प्राणायाम की क्रियाओं का अभ्यास करने से पहले कुछ तथ्यों को जानना आवश्यक है।

**१. आसन**-योग दर्शन में बताये गये आठ योगाङ्गों में प्राणायाम ही एक ऐसा अंग है जिसके अभ्यास करने से पूर्व-पूर्व अंग 'आसन' की सिद्धि का विधान किया गया है। महर्षि पतञ्जलि के सूत्र में भी 'तस्मिन् सति' शब्द आये हैं तथा भोजवृत्ति में स्पष्ट है-**आसनजयान्तरं प्राणायाममाह।** अतः प्राणायाम से पहले आसन की सिद्धि में यह सोचकर शिथिलता बरतते हैं कि शारीरिक कारणों से उनके द्वारा स्थिर बैठा नहीं जा सकेगा। यह अवधारणा ठीक नहीं है। कुछेक अति विषम शारीरिक स्थितियों को छोड़ते हुए अधिकांश स्थितियों में प्रयास करने पर आसन सिद्धि सम्भव है, परन्तु उसके लिए प्रयास की आवश्यकता है, जैसाकि योगदर्शन का सूत्र है-**स तु दीर्घकालनैरन्तर्यसत्कारासेवितो दृढभूमिः।।** आसन का अभ्यास दीर्घकाल तक किया जावे, निरन्तरता से किया जावे तथा सत्कारपूर्वक यह समझकर किया जावे कि आसन की सिद्धि के बिना आत्मदर्शन नहीं-तो अभ्यासी की आसन सिद्धि अवश्य होगी। ऐसे कई उदाहरण हैं जिन्होंने घुटनों के दर्द के उपरान्त भी आसन सिद्धि के लिए प्रयास किये व उन्हें सफलता मिली। डॉ. कृष्णपाल सिंह जब यज्ञ आदि कराने जाते थे तो भी कुर्सी आदि पर बैठ कर यज्ञ कराते थे, उत्सव आदि में स्टेज पर नहीं बैठ सकते थे, परन्तु उन्होंने धीरे-धीरे प्रयास किया-अभ्यास किया-कुछ ही समय में आज वे घण्टों बिना किसी व्यवधान के एक आसन में बैठने में सक्षम हैं। बौद्धों की विपश्यना में पहले दिन ही प्रातः, मध्याह्न व सायं कई घण्टे एक आसन पर बैठाते हैं, प्रारम्भ में कठिनाई होती है, धीरे-धीरे शरीर उसी स्थिति को स्वीकार कर लेता है। दस दिन बाद तो पैरों में पीड़ा का पता नहीं चलता।

महर्षि ने कम से कम दो घण्टे उपासना करने का निर्देश दिया है अतः प्रत्येक साधक को प्रातः सायं दो-दो घण्टे के आसन की शारीरिक सिद्धि करनी आवश्यक है। आसन में बैठने के बाद अंगुलियाँ हिलाना, गर्दन को धीरे-धीरे हिला लेना, हाथों की घुटनों पर स्थिति को थोड़ा-सा बदल लेना, पैर के अंगूठे व अंगुलियों को धीरे से हिला लेना, आँखों की पुतलियों को धीरे से घुमा लेना, कमर को थोड़ा झुका लेना या थोड़ा सीधा कर लेना, तेज श्वास से छाती व पेट को अस्थिर कर लेना, वा शरीर के अन्य अंगो में थोड़ी चंचलता/अस्थिरता ले आना आसन की सिद्धि में बाधक हैं। शरीर की निश्चेष्टता से मन की एकाग्रता बढ़ती है-यह सांसारिक व्यापारों में भी देखा जाता है। यदि आँखों को स्थिर कर लिया जावे तो अधिकांशतः मन में कुछ एकाग्रता आ जाती है। अतः आसन की स्थिरता की सिद्धि करते हुए इन छोटी-छोटी, परन्तु महत्त्वपूर्ण बातों को ध्यान में रखना चाहिये तथा जल्दबाजी न करके धैर्य्यपूर्वक

अभ्यास करना चाहिये।

यदि पहले दिन एक मिनट के लिए आसन लगाते हैं व प्रतिदिन एक मिनट बढ़ाते चले जावें तो एक माह में ३० मिनट आसन का अभ्यास हो सकता है तथा छह माह में ३ घण्टे का अभ्यास किया जा सकता है। यदि दो दिन में भी एक मिनट बढ़ायें तो भी ६ माह में डेढ़ घण्टे का अभ्यास हो सकता है। यदि ७ दिन एक मिनट प्रतिदिन बढायें तथा आगे प्रति सप्ताह एक मिनट भी बढ़ावें तो भी समयान्तर में घण्टे भर का अभ्यास हो सकता है। अतः आसन का अभ्यास धीरे-धीरे बढ़ाते रहकर सुखपूर्वक अपनी इच्छा अनुसार अथवा महर्षि के निर्देश अनुसार दो घण्टे या अधिक की अवधि प्राप्त की जा सकती है। यह अवश्य ध्यान रहे कि आसन की अवधि बढ़ाने में जबरदस्ती नहीं करनी है तथा सुखपूर्वक ही अवधि को बढ़ाना है। तप की साधना भी सुखपूर्वक होनी चाहिये, जिससे प्रसन्नता उत्पन्न हो, क्योंकि बिना प्रसन्नता के अनन्त समापत्ति में मन एकाग्र नहीं हो सकेगा तथा आसन की सिद्धि भी नहीं हो सकेगी।

योग दर्शन में '**स्थिरसुखमासनम्**' सूत्र आया है, जिसमें कहा गया है कि आसन में स्थिरता हो व सुखपूर्वकता हो। लेकिन इससे आगे ४७ वें सूत्र '**प्रयत्नशैथिल्यानन्तसमापत्तिभ्याम्**' में प्रयत्न शैथिल्य और अनन्त समापत्ति दो उपाय भी बतायें हैं। प्रयत्न शैथिल्य पर अधिकतः चर्चा होती है, यहाँ अनन्त समापत्ति पर भी विचार करना समीचीन होगा। व्यास भाष्य में कहा गया है-**अनन्ते वा समापन्नं चित्तमासनं निर्वर्तयति।** भोजवृत्ति में उल्लेख है-''**यदा आकाशादिगत आनन्त्ये चेतसः समापत्तिः क्रियतेऽव्यवधानेन तादात्म्यमापद्यते तदा देहाहंकाराभावान्नाऽऽसनं दुःखजनकं भवति।**'' महर्षि दयानन्द जी महाराज ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका में लिखते हैं-''अर्थात् जिसमें सुखपूर्वक शरीर और आत्मा स्थिर हों, उसको आसन कहते हैं.....।'' उक्त से स्पष्ट है कि आसन केवल शरीर से बैठने की क्रिया करने का ही नाम नहीं है, स्थिरता व सुख होना चाहिये। स्थिरता व सुख भी केवल शरीर का ही होना अभिप्रेत नहीं है, क्योंकि केवल शरीर का ही सुख व स्थिरता अभिप्रेत होती तो संभवतः योगाङ्गों में आसन की गणना ही न की जाती। आसन में शरीर की स्थिरता व सुखपूर्वकता के साथ मन की स्थिति भी बनाया जाना आवश्यक है। प्रयत्न शैथिल्य होना आवश्यक है, क्योंकि यदि आसन की स्थिति को स्थिर व सुखपूर्वक करने में ही शरीर व मन लगे रहेंगे तो आसन की सिद्धि नहीं होगी, शरीर की अनुभूति भी बनी रहेगी तथा मन भी इसी कार्य को सम्पन्न करने में शरीर में इतस्ततः लगा रहेगा। आसन में सुख हो, स्थिरता हो, वह भी प्रयत्न में शिथिलता लिए हुए हो, उसके लिये दुःखित करने वाला व मन को अस्थिर करने वाला प्रयत्न न हो। सीधा बैठना आदि में प्रथम स्थिति में थोड़ा प्रयत्न तो होगा, परन्तु जब अनन्त समापत्ति में मन एकाग्र हो जावेगा तब शरीर को सीधा रखने, सुखपूर्वक रखने, शिथिल रखने में कोई प्रयत्न विशेष नहीं करना होगा।

अनन्त समापत्ति के विषय में भोजवृत्ति में आया है-**अव्यवधानेन तादात्म्यम् आपद्यते**-बिना किसी व्यवधान के तादात्म्य प्राप्त हो जाता है। योगदर्शन के प्रथम पाद के ४१ वें सूत्र में आया है...**तत्स्थ तदञ्जनता समापत्तिः।** व्यास भाष्य में महर्षि व्यास लिखते हैं ''...**या तत्स्थ तदञ्जनता तेषु स्थितस्य तदाकारापत्तिः सा समापत्तिः**'' भोजवृत्ति में उल्लेख है- ''**तत्स्थत्वं तत्रैकाग्रता, तदञ्जनता तन्मयत्वम्**...'' उक्त के आधार पर अनन्त में चित्त की समापत्ति करनी चाहिये, बिना व्यवधान के अर्थात् निरन्तरता से तादात्म्य बनाना चाहिये। व्यास भाष्य में **अनन्त** शब्द आया है तथा भोजवृत्ति में **आकाशादिगत आनन्त्ये** शब्द आये हैं, क्योंकि साधक प्राथमिक स्तर का है, आसन भी तीसरा ही योगाङ्ग है अतः अनन्त आकाश में मन की समापत्ति करना, तादात्म्य स्थापित करना, एकाग्रता करना, तन्मय हो जाना, तदाकारापत्ति हो जाना, अभ्यासी को अभीष्ट है। यदि अनन्त का अर्थ अनन्त परमात्मा भी लेना चाहें तो भी अनन्त परमात्मा की कल्पना करके उसमें चित्त की समापत्ति कर सकते हैं। वैसे भी असम्प्रज्ञात समाधि से पूर्व तो ईश्वर का साक्षात्कार होता नहीं तथा अभ्यासी साधक आगम व अनुमित ज्ञान के आधार पर ईश्वर को निराकार अनन्त आदि मानकर ही चित्त को एकाग्र करने हेतु प्रयास करता है।

भाव यह है कि अभ्यासी को स्थिर व सुखपूर्वक

आसन के लिये केवल शरीर तक ही सीमित नहीं रहना बल्कि प्रयत्नशैथिल्य का अभ्यास करके अनन्त आकाश में मन को टिकाकर, एकाग्र करके अनन्त समापत्ति करनी है, जिससे अभ्यासी का शरीर के साथ-साथ मन भी समाहित होगा, एकाग्र होगा, स्थिर होगा। व्यवधान रहित तादात्म्य होने से अनन्त आकाश में समापत्ति होने से भोजवृत्ति-तदा देहाहंकाराभावाद्- के अनुसार देह के अहंकार का अभाव होगा। इसके लिए यह प्रक्रिया अपनायी जा सकती है- आसन में बैठकर मन को सामने की दिशा में अनन्त तक प्रेषित करें, कुछ दिन अभ्यास करें। जब मन स्थिर होने लगे तो सन्ध्या के मनसापरिक्रमा मन्त्रों की दिशाओं अनुसार दायीं ओर, पीछे की ओर, बायीं ओर, नीचे की ओर तथा ऊपर की दिशा में मन को अनन्त तक जाने दें, उसे एकाग्र करें। एक दिशा का अभ्यास परिपक्व होने पर आगे की दिशा का अभ्यास करें। यह अभ्यास होने पर मन को अनन्त आकाश में सभी दिशाओं में प्रेषित करें तथा स्थिर करें। अभ्यास होने पर स्पष्टत: शरीर की स्थिति का भान नहीं रहेगा तथा ऐसी प्रतीति होगी कि शरीर अधर में ही है, टिका हुआ नहीं है, चारों ओर आकाश ही आकाश है। यही देह अहंकार अभाव कहा जा सकता है। आसन-सिद्धि का यह महत्त्वपूर्ण अंग है, यही आसन- सिद्धि की पहचान भी है।

यदि आसन में ही एकाग्रता कर ली तो फिर ध्यान व समाधि में क्या करेंगे? उत्तर होगा-आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान, व सम्प्रज्ञात समाधि-सभी योगाङ्गों में एकाग्रता होती है, परन्तु स्तर भिन्न होता है, उत्तरोत्तर बढ़ता है।

**१. परोपकारी नवम्बर द्वितीय २०१५, अप्रैल प्रथम २०१६, अगस्त द्वितीय २०१६**

---

ईश्वर का आश्रय न करके कोई भी मनुष्य प्रजा की रक्षा नहीं कर सकता। जैसे ईश्वर सनातन न्याय का आश्रय करके सब जीवों को सुख देता है, वैसे ही राजा को भी चाहिये कि प्रजा को अपनी न्याय-व्यवस्था से सुख देवे।

**-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ७.३९**

मनुष्यों को चाहिये कि सदा यज्ञ का आरम्भ और समाप्ति को करें और संसार के जीव को अत्यन्त सुख पहुँचावें।

**-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.६२**

# ऋषिवर के उपकार

**मोहन उपाध्याय एम.ए.**

भारत में राज विदेशी था
घनघोर निराशा छायी थी,
कुछ नहीं दिखायी देता था
ज्यों रात अँधेरी आयी थी।

पर तभी दिव्य फैला प्रकाश
वेदों से हुआ उजाला था,
ऋषिवर ने ज्योति जलायी थी
मिट गया अँधेरा काला था।

उद्घोष किया सबसे पहले-
''सर्वोत्तम होता है स्वराज्य,
परराज्य भले ही हो अच्छा
पर वह होता है सदा त्याज्य।''

ऋषिवर ने यह बतलाया था
वस्तुएँ स्वदेशी अपनायें,
जीविका सभी को मिल जाती
नाता स्वदेश से जुड़ जाये।

अपनी भाषा से, संस्कृति से
जनजीवन का होता विकास,
ऋषिवर ने अलख जगायी थी
संस्कृत हिन्दी हैं पास-पास।

आश्रम गृहस्थ का ज्येष्ठ श्रेष्ठ
आधार सभी के जीवन का,
ऋषिवर ने मनु का कथन कहा
आर्यों के जीवन-दर्शन का।

वर्णाश्रम-धर्म सदा उत्तम
सामाजिक उन्नति का साधन,
ऋषिवर ने यह सिखलाया था-
प्रभु का नित करना आराधन।

पुरुषार्थ चतुष्टय रख सम्मुख
जीवन को सुखी बनाना है,
ऋषिवर ने पथ दिखलाया था-
आनन्द मोक्ष का पाना है।

# शङ्का समाधान - १४

**डॉ. वेदपाल, मेरठ**

**शङ्का**- गर्भाशय में आत्मा का प्रवेश कब?

**कृष्णचन्द्र गर्ग, पंचकूला ( हरियाणा )**

**समाधान**-आपने पुनर्जन्म की घटनाओं के परिप्रेक्ष्य में पूर्वजन्म की स्मृतियों के आधार पर मृत्यु के पश्चात् पुनर्जन्म में अन्तर नौ मास से अधिक अथवा कुछ दिन या कुछ सप्ताह के विवरणों को दृष्टिगत रखकर आत्मा के गर्भ प्रवेश काल विषयक वैदिक दृष्टिकोण जानना चाहा है।

वर्तमान जीवन में पूर्वजीवन की स्मृतियों के वर्णन आंशिक सत्य होने सम्भव हैं, किन्तु उन्हें इदमित्थंतया सत्य स्वीकार करना स्यात् सर्वांशत: शास्त्रमूलक/शास्त्रसमर्थित होना सम्भव न हो। आत्मा के गर्भाशय प्रवेश के सन्दर्भ में निम्न बिन्दु ध्यातव्य हैं-

गर्भ शब्द 'गृ सेचने' (भ्वादि.), 'गॄ निगरणे' (तुदादि.) धातु से 'अर्त्तिगृभ्यां भनन्' उणादि ३.१५२ से भन् प्रत्यय होकर निष्पन्न होता है। इसका अर्थ है-सींचना अथवा निगरण करना। गर्भ में दोनों अर्थ चरितार्थ होते हैं अथवा दोनों की पूर्णता ही गर्भ है।

पुनर्जन्म की वह घटनाएँ, जिनके आधार पर मृत्यु के दिन ही पुनर्जन्म होना अथवा तीन-चार महीने में ही पुनर्जन्म होने के सम्बन्ध में यह विवेच्य है कि-

आत्मा का गर्भाशय प्रवेश मनुष्य के गृहप्रवेश आदि के समान नहीं है। गृह आदि में प्रवेश से पूर्व मनुष्य को उन्हें अपने से पृथक् बाह्य साधनों से निर्मित करना पड़ता है और उसके पूर्णत: निर्मित होने पर भी यह उस निर्माता की इच्छा पर निर्भर है कि वह चाहे तो प्रवेश करे अथवा न करे। यदि वह उस घर में प्रवेश नहीं करता तब भी घर की स्वतन्त्र सत्ता (भले ही वह भौतिक है) बनी रहती है। कई बार निर्माता के न रहने अथवा अन्य को हस्तान्तरित कर देने पर भी उसकी सत्ता पृथक् बनी रहती है। ये दोनों सत्ताएँ पूर्णत: एक-दूसरे से निरपेक्ष भी होती हैं, किन्तु आत्मा व गर्भ के सम्बन्ध में स्थिति पूर्णत: भिन्न है। यदि रेतस् के माध्यम से आत्मा का सिञ्चन और स्त्री द्वारा उसका निगरण नहीं हुआ, तब गर्भ स्थापन ही नहीं होता है। गर्भ की वृद्धि होकर माता के उदर से बाहर आने (जिसे जन्म कहा जाता है) का तो प्रश्न ही नहीं।

आत्मा के प्रवेश करने पर ही गर्भ की वृद्धि होकर यथासमय उसका जन्म होता है। आत्मा की सत्ता न रहने पर वह भ्रूण मात्र मांस-पिण्ड रह जाता है। किसी कारणवश जन्म से पूर्व आत्मा द्वारा गर्भ का त्याग करने पर भी जन्म नहीं होता। उस स्थिति में भी उस मांस-पिण्ड/भ्रूण जिसे लोक में मृत शिशु भी कहते हैं, को चिकित्सकीय माध्यमों से बाहर निकालना पड़ता है।

**आत्मा का प्रयत्न**-कर्तृत्व गुण गर्भ की सभी अवस्थाओं में सूक्ष्मवीक्षण यन्त्रों (Altra sound/M.R.I.) द्वारा ज्ञात करना सम्भव होता है। इसी प्रकार भोक्तृत्व गुण के कारण वह गर्भनाल के माध्यम से माता के शरीर से आवश्यक अंश ग्रहण कर बढ़ता रहता है। **यदि मृत्यु के दिन ही पुनर्जन्म हुआ, तब लगभग नौ मास की अवधि तक वह आत्मा तो वहाँ था नहीं, तब क्या किसी अन्य आत्मा की उपस्थिति में वह गर्भ पलता-बढ़ता रहा? और जन्म के दिन अचानक दूसरा आत्मा आया और उसने मृत्यु के तुरन्त बाद उसी दिन दूसरा जन्म ग्रहण कर लिया। ऐसी स्थिति में पूर्व आत्मा क्या उसे छोड़कर चला गया? अथवा उस शरीर में दो आत्मा एक साथ रहने लगे? जिस क्षण भी एक आत्मा उस शरीर को छोड़ेगा, तब क्या उसकी आंशिक मृत्यु होगी?** आदि-आदि अनेक प्रश्न उपस्थित होते हैं। इन प्रश्नों पर शास्त्रकारों का अभिमत उपलब्ध नहीं है। इससे ज्ञात होता है कि पूर्व मनीषी उसी दिन (मृत्यु के दिन ही) जन्म के सिद्धान्त को स्वीकार नहीं करते हैं। यही स्थिति कुछ मास या दिन की भी है।

**ऐतरेय उपनिषद् के अनुसार**-आत्मा पहले पुरुष के गर्भ में रेतस्-वीर्य के रूप में होता है। वह समस्त अंगों के तेज-सार को अपने अन्दर धारण करता है। तदनन्तर जब वह पुरुष स्त्री में रेतस् को सींचता है, वह इसका प्रथम

जन्म कहलाता है। तदनु माता के शरीर से पोषण प्राप्त करता हुआ जब उससे बाहर आता है, तब वह इसका द्वितीय जन्म है। तद्यथा-

**पुरुषे ह वा अयमादितो गर्भो भवति यदेतद्रेतस्तदेतत् सर्वेभ्योऽङ्गेभ्यस्तेजः सम्भूतम्। आत्मन्येवात्मानं बिभर्ति, तद्यदा स्त्रियां सिञ्चत्यथैनञ्जनयति, तदस्य प्रथमं जन्म।।**

**...तं स्त्री गर्भं बिभर्त्ति।...। तदस्य द्वितीयं जन्म।।**

-ऐतरेय उप. २.१

उपर्युद्धृत सन्दर्भ के महत्त्वपूर्ण बिन्दु हैं-

१. स्त्री के गर्भाशय में प्रवेश करने से पूर्व आत्मा पुरुष के गर्भ में रेतस् के रूप में होता है।

२. यह रेतस् पुरुष के समस्त अंगों के सार को ग्रहण कर पोषण प्राप्त करता है। उस आत्मा की सन्निधि (स्त्री के गर्भाशय में) में ही शरीर का निर्माण एवं संवर्धन होता है। वर्तमान में डी.एन.ए. ( D.N.A. ) के परीक्षण इसे प्रमाणित करते हैं कि आत्मा जिस (पुरुष के) शरीर से आया था उसके अनेक संकेत उस सार के साथ सम्मिश्रित रहते हैं।

३. स्त्री में रेतस् का सिंचन आत्मा का प्रथम जन्म है। माता के उदर से बाहर आना द्वितीय जन्म है।

महर्षि दयानन्द सरस्वती का एतद्विषयक मन्तव्य भी द्रष्टव्य है-

'' ...परमेश्वर उस जीव के पाप-पुण्यानुसार जन्म देता है, वह वायु, अन्न, जल अथवा शरीर के छिद्र द्वारा दूसरे के शरीर में ईश्वर की प्रेरणा से प्रविष्ट होता है। जो प्रविष्ट होकर क्रमशः वीर्य में जा, गर्भ में स्थित हो, शरीर धारण कर, बाहर आता है।'' -सत्यार्थप्रकाश समु. ९ पृ. १६५

अतः पुरुष-स्त्री के संयोग के समय शुक्र-शोणित के मिलन के समय ही आत्मा का गर्भाशय में प्रवेश होता है। आधुनिक चिकित्सा विज्ञान भी इसी मत का समर्थक है।

## दयानन्द धर्मार्थ चिकित्सालय

परोपकारिणी सभा द्वारा संचालित ऋषि उद्यान में वर्ष २०१२ से आयुर्वेदिक चिकित्सालय चल रहा है। चिकित्सालय में उपलब्ध सभी औषधियाँ निःशुल्क दी जाती हैं। डॉ. रमेश मुनि जी चिकित्सक के रूप में इस चिकित्सालय का कुशलतापूर्वक कार्यभार सम्भाल रहे हैं।

दानी महानुभावों से सहयोग की भी अपेक्षा है।

**खाताधारक का नाम - परोपकारिणी सभा, अजमेर (PAROPKARINI SABHA AJMER)**

१. बैंक का नाम-**भारतीय स्टेट बैंक, डिग्गी बाजार, अजमेर।**

बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या-**10158172715**

**IFSC-SBIN0007959**

२. बैंक का नाम-**आई.डी.बी.आई**, पावर हाउस के सामने,

जयपुर रोड, अजमेर।

बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या-**091104000057530**

**IFSC-IBKL0000091**

email : psabhaa@gmail.com

जो विद्वान् लोग परोपकार बुद्धि से विद्या का विस्तार करने, सुगन्धि, पुष्टि, मधुरता रोगनाशक गुणयुक्त पदार्थों का यथायोग्य मेल अग्नि के बीच में उनका होम कर शुद्ध वायु, वर्षा का जल वा ओषधियों का सेवन करके शरीर को आरोग्य करते हैं वे इस संसार में अत्यन्त प्रशंसा के योग्य होते हैं।

**- महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.५८**

# वैदिक पुस्तकालय अजमेर
# द्वारा प्रकाशित व उपलब्ध नये संस्करण

**१. सत्यार्थ प्रकाश में क्या है?** **लेखक - प्रो. धर्मवीर,** **प्रकाशक**- परोपकारिणी सभा, अजमेर,
**पृष्ठ संख्या**- ३२ **मूल्य** - रु. १५/-

प्रस्तुत पुस्तक डॉ. धर्मवीर जी के युवापन की रचना है। इस पुस्तक को पं. भारतेन्द्रनाथ जी (महात्मा वेदभिक्षु) ने डॉ. धर्मवीर जी से आग्रहपूर्वक लिखवाया था। पहली बार इसे सन् १९७५ में महात्मा वेदभिक्षु जी ने ही प्रकाशित किया था। एक लम्बे अन्तराल के बाद परोपकारिणी सभा ने इसका पुनःप्रकाशन किया है। इस पुस्तक को पढ़कर नये से नया व्यक्ति भी सत्यार्थप्रकाश के महत्व को समझ सकता है अर्थात् यह पुस्तक आर्यसमाज के प्रचार में सहायक सिद्ध हो सकती है। आर्य महानुभावों से अनुरोध है कि इसे अधिक से अधिक संख्या में खरीदकर नई पीढ़ी तथा नये लोगों को वितरित करें तथा प्रकाशकों से भी निवेदन है कि अधिक से अधिक संख्या में इसे मंगायें ताकि लोग इसे खरीद सकें। इस ग्रन्थ को पढ़ने से ऋषि दयानन्द के अमरग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश को पढ़ने की प्रेरणा मिलती है। सत्यार्थप्रकाश की समस्त विषयवस्तु को इस ग्रन्थ में समाहित किया गया है। पाठक इसे पढ़कर लाभ उठायेंगे, ऐसा हमारा विश्वास है।

**२. महर्षि दयानन्द का पत्र-व्यवहार ( दो भाग में )**
**मूल्य - रु. ८००/- पृष्ठ संख्या - प्रथम व द्वितीय भाग-६९६+६९६**
**महर्षि दयानन्द का महत्त्वपूर्ण पत्र-व्यवहार मूल्य - रु. ४००/- पृष्ठ संख्या - ६१६**

ऐतिहासिक महत्त्व का ग्रन्थ है। इस संस्करण की यह विशेषता है कि पत्र और उसका उत्तर साथ-साथ दिये गए हैं। आर्य जाति और आर्यावर्त्त के उत्थान की महती आकांक्षा ऋषिवर के पत्रों में स्पष्ट झलकती है। माननीय डॉ. वेदपाल जी द्वारा सम्पादित यह ग्रन्थ पठनीय एवं संग्रहणीय है। साज-सज्जा और मुद्रण भी उत्तम है। समाप्त होने से पहले- पहले क्रय कर लेवें तो अच्छा रहेगा।

**३. 'नवयुग की आहट',महर्षि दयानन्द सरस्वती का जीवन-चरित**
**मूल्य - रु. ६०/- पृष्ठ संख्या- १९२**

१०० से अधिक उपशीर्षकों एवं १३ अध्यायों में लिखा गया ऋषि का यह अनुपम जीवन चरित है। लेखक हैं- ऋषि मिशन के दीवाने, आर्यजाति के प्रहरी, दिलजले आर्य साहित्यकार प्रा. राजेन्द्र जिज्ञासु। पुस्तक में आप जान पायेंगे कि ऋषि का पाखण्ड-खण्डन, सामाजिक दोषों के निराकरण, स्त्री-शिक्षा, अछूतोद्धार, वेदोद्धार, सामाजिक पुनर्जागरण, राष्ट्र-उद्धार के क्षेत्र में क्या योगदान है तथा उनके समकालीन और परवर्ती महापुरुष उनके विषय में क्या कहते हैं।

**४. इतिहास की साक्षी: लेखक- प्रा. राजेन्द्र जिज्ञासु** **मूल्य - रु. ५०/-** **पृष्ठ संख्या - ९६**

९६ पृष्ठों की इस पुस्तक में विद्वान् लेखक ने महर्षि दयानन्द सरस्वती एवं पं. श्रद्धाराम फिल्लौरी के सम्बन्ध में तथ्यात्मक जानकारी दी है। श्रद्धाराम फिल्लौरी के हाथ के लिखे पत्र की एवं अन्य ऐतिहासिक दस्तावेजों की फोटो कापियाँ इसमें दी हैं, जो अन्यत्र दुर्लभ हैं।

**५. असली महात्मा ( हिन्दी )** **मूल्य - रु. २००/-** **पृष्ठ संख्या - २४७**

यह पुस्तक मूलरूप से तेलुगु में लिखी गई है। लेखक श्री एम.वी.आर. शास्त्री ने जिस शोधपूर्ण ढंग से और जिस सरसता से इस पुस्तक को लिखा है, उससे दस्तावेजों में रुचि रखने वालों और उपन्यास में रुचि रखने वालों के लिये भी यह एक अतुलनीय ग्रन्थ है। हिन्दी में अनुवाद करते समय श्री जे.एल. रेड्डी ने लेखक के मूल भावों को जिस दक्षता से संजोया है, उससे हिन्दी पाठकों को ये ऐतिहासिक दृष्टि वाला ग्रन्थ किसी उपन्यास से कम नहीं लगेगा।

---

## वैदिक पुस्तकालय, अजमेर से क्रय की जाने वाली
## पुस्तकों की राशि ऑनलाइन जमा कराने हेतु

खाता धारक का नाम - **वैदिक पुस्तकालय, अजमेर।**
बैंक का नाम - **पंजाब नेशनल बैंक, कचहरी रोड, अजमेर।**
बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या - **0008000100067176**
**IFSC - PUNB0000800**

# पावन-पावन दयानन्द

**इन्द्रजित् देव**

महर्षि दयानन्द सरस्वती जी का व्यक्तित्व व कृतित्व पावन ही न था, पावन-पावन भी था। भक्त अमींचन्द, वकील मुंशीराम, स्वामी सर्वदानन्द, रामप्रसाद बिस्मिल, गुरुदत्त विद्यार्थी, लाला लाजपतराय के पिता राधाकृष्ण, महात्मा आनन्द स्वामी के पिता व मथुरा की वैश्या आदि अनेक ऐसे व्यक्ति हुए हैं जो महर्षि के प्रवचनों को सुनकर अथवा उनके ग्रन्थों को पढ़कर अपना पतित व नास्तिक जीवन त्यागकर पावन व्यक्तित्व के धनी बने थे। इनके जीवन की घटनाएँ पढ़कर पता चलता है कि वे पवित्र जीवन के यात्री बने थे-महर्षि के कारण। महर्षि पतित-पावन थे। इस विषय में बहुत कुछ लिखा जा चुका है। अतः वर्तमान निबन्ध में इनका नामोल्लेख करके ही आगे बढ़ते हैं।

ईश्वर, वेद, धर्म, यज्ञ, व्यास व कपिल ऋषि, योगेश्वर कृष्ण, छः दर्शन व नारी आदि ऐसे हैं जो पवित्र थे, पावन थे, परन्तु विधर्मियों, स्वार्थियों, अज्ञानियों तथा दुराग्रहियों के कुतर्कों, गलत व्याख्याओं, प्रक्षिप्त कथाओं तथा अवैदिक ग्रन्थों के कारण ये सब पतित रूप में समाज में स्थापित हुए थे। महर्षि दयानन्द सरस्वती ने अपने ग्रन्थों, प्रवचनों, पत्रों तथा शास्त्रार्थों से इन पर लगाए आरोप व आक्षेपों को दूर किया तथा इन्हें इनके वास्तविक, शुद्ध तथा पावन रूप में पुनर्स्थापित किया। दूसरे शब्दों में इन्हें अपने-अपने पावन रूप में सिद्ध किया। अतः महर्षि दयानन्द को पावन-पावन दयानन्द कहना हमें अभीष्ट है।

वेद ईश्वरीय वाणी है। ईश्वर पवित्रतम है। उसके कार्य, विचार व उसकी व्यवस्था सम्पूर्ण व पावन है। ईश्वर के बाद यदि कोई पवित्र है तो वह वेद ही हैं। पवित्र वस्तु से पवित्र ही रचना होती हैं। मनु महाराज ने **'वेदोऽखिलो धर्ममूलम्'** कहकर वेदों की महत्ता घोषित कर दी है। सृष्टि के आरम्भ से लेकर महाभारत काल तक मनुष्य जाति के मन-मस्तिष्क पर वेदों का एकछत्र राज रहा है। वेद-ज्ञान लेकर आर्यों ने चक्रवर्ती राज किया व नये-नये आविष्कार किए, परन्तु महाभारत के उपरान्त सब कुछ बदल गया। वेद से श्रद्धा व आस्था कम हो गई, क्योंकि कथित ब्राह्मणों व आचार्यों ने ऐसे-ऐसे ग्रन्थ बना लिए जिनमें वेदानुकूलता न थी। कई वेद भाष्यकारों ने वेदों में मांस-भक्षण, सुरापान, पशुबलि, इतिहास, अश्लीलता व तर्कहीनता के अंश प्रस्तुत किए। पुराने आचार्यों में माध्वाचार्य ने ऋग्वेद के थोड़े से अंशों का ही भाष्य किया। वेद व श्रुति के नाम से आदि शंकराचार्य उपनिषदों के ही प्रमाण देते रहे। महीधर, उव्वट तथा सायण आदि ने वेदों के जो भाष्य किए, उनके विषय में इतना लिखना ही पर्याप्त है कि उन्हें पढ़कर किसी भी विचारशील व सत्याग्रही व्यक्ति की वेदों पर तनिक भी श्रद्धा नहीं रही थी। इन्हीं के आधार पर विधर्मियों तथा पाश्चात्य लेखकों ने वेदों पर सीधे आक्षेप किए। एक पाश्चात्य लेखक ने तो यहाँ तक लिखा-''वेद गडरियों के गीत हैं।'' अशुद्ध वेदभाष्य के प्रमाण अनेक हैं, परन्तु विस्तारभय से कुछ ही प्रमाण प्रस्तुत हैं-

**ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद् बाहू राजन्यः कृतः।**
**ऊरू तदस्य यद्वैश्यःपद्भ्यां शूद्रोऽअजायत।।**

-यजु. ३१/११

इस मन्त्र में समाज को मनुष्य-शरीर से उपमा देकर ईश्वर ने कहा है कि मुख के समान मुख्य गुण व कर्मों से सम्पन्न होने से ब्राह्मण वर्ण उत्पन्न हुआ। भुजाओं के समान बल-पराक्रमयुक्त क्षत्रिय वर्ण उत्पन्न किया। शरीर के मध्यभाग जङ्घाओं के समान कृषि-वाणिज्यादि गुणों से सम्पन्न वैश्यवर्ण उत्पन्न किया तो शरीर के सबसे नीचे भाग पग के समान शारीरिक श्रम के काम करने वाले शूद्र वर्ण को पैदा किया। यह मन्त्र प्रेम और सामाजिक एकता का पुनीत सन्देश देता है, परन्तु महर्षि से पूर्व उलटी खोपड़ी वाले भाष्यकारों ने यह अनर्थ किया कि ईश्वर के मुख से ब्राह्मण, बाँहों से क्षत्रिय, जंघाओं से वैश्य तथा पैरों से शूद्र उत्पन्न हुए। यह अर्थ तर्कहीन है व सामाजिक वैमनस्य व राष्ट्रीय पतन का मुख्य कारण बना।

मृतक श्राद्ध, मूर्तिपूजा, मांस-भक्षण, अश्लीलता व इतिहासपरक अर्थ भी भाष्यकारों ने कर रखे थे। बुद्ध की

तरह महर्षि भी इन अर्थों के आधार पर वेद-विमुख हो सकते थे, परन्तु अपने तप व स्वाध्याय के बल पर उन्होंने इन अर्थों के प्रति विद्रोह किया। बुद्ध की तरह वे नास्तिक नहीं बने। अपने नाम से नया सम्प्रदाय भी नहीं चलाया। उनके विचार में मन्त्रों के अर्थों में जो सही लिखा है, वही ग्राह्य है तथा जो गलत है, वह त्याज्य है। इस आधार पर सभी पाखंड व अन्धविश्वास स्वत: गिर जाते हैं। उन्होंने दो नये शब्दों की स्थापना की-आर्ष तथा अनार्ष। अब तक संस्कृत का प्रत्येक वाक्य प्रामाणिक माना जाता था, परन्तु महर्षि ने इसको अस्वीकार कर दिया। दूसरी खोज उन्होंने यह की कि वेद के सभी शब्द रुढ़ि न होकर यौगिक हैं। निरुक्तकार यास्क ऋषि की भी यही घोषणा थी। महर्षि ने किस प्रकार वेदमन्त्रों के अशुद्ध अर्थों को शुद्ध किया, इसका प्रमाण यह है-

**वाचं ते शुन्धामि प्राणं ते शुन्धामि चक्षुस्ते शुन्धामि श्रोत्रं ते शुन्धामि नाभिं ते शुन्धामि मेढ्रं ते शुन्धामि पायुं ते शुन्धामि चरित्राँस्ते शुन्धामि।।**

- यजु. ६-१४

**उव्वट व महीधर द्वारा किए गए अर्थ**-यजमान-पत्नी पशु के समीप बैठकर मरे पशु के प्राण के आयतन को शुद्ध करती है अर्थात् पात्रेजन पात्र से जल लेकर पशु के अंगों का स्पर्श करते हुए कहती है- हे प्रभु! मैं तेरे वागेन्द्रिय (=वाणी), प्राण, नेत्र, कान, मूत्रेन्द्रिय, मलेन्द्रिय तथा पैर आदि सब इन्द्रियों को शुद्ध करती हूँ। उनके अनुसार इस मन्त्र का देवता (=विषय) पशु है।

यह कैसा वीभत्स शोधन है!

इस मन्त्र का अर्थ करते हुए महर्षि दयानन्द ने इसका देवता विद्वान् को माना है तथा जो अर्थ किया है, वह इस प्रकार है-हे शिष्य! मैं विविध शिक्षाओं से तेरी वाणी को शुद्ध अर्थात् धर्मानुसार करता हूँ। तेरे नेत्रों को शुद्ध करता हूँ अर्थात् इनसे तुम वस्तुओं, व्यक्तियों को सही रूप में देखो व उचित व्यवहार करो। जिससे नाड़ी आदि बन्धे हैं, उस नाभि को पवित्र करता हूँ जिससे मूत्रोत्सर्ग आदि किए जाते हैं, उस लिङ्ग को पवित्र करता हूँ। जिससे तेरी रक्षा की जाती है, उस गुदेन्द्रिय को पवित्र करता हूँ। तेरे समस्त व्यवहारों को पवित्र, शुद्ध तथा धर्मानुसार करता हूँ। गुरु पत्नी के पक्ष में सर्वत्र ''करती हूँ'', यह मानना चाहिए।

इस मन्त्र में शिक्षा का उच्चादर्श वर्णित है। आचार्य का दायित्व केवल अक्षर ज्ञान देना ही नहीं, अपितु शिष्य की समस्त इन्द्रियों में पवित्रता का आधान तथा व्यवहार की शुद्धि भी आचार्य का दायित्व है। निरुक्तकार यास्काचार्य ने भी '**आचार्यः कस्मादाचारं ग्राहयति**' लिखकर आचार्य का कर्त्तव्य, शिष्यों के आचार को उन्नत बनाना, बताया है। यह भी ध्यान देने योग्य है कि मृत प्राणी के शरीर में गोलक ही रहते हैं, इन्द्रियाँ नहीं। बोलने से वाक्, जीवन देने से प्राण, देखने से चक्षु, सुनने से कान आदि अंग कहाती हैं। अन्यथा नहीं कहातीं। जब इनमें ये शक्तियाँ नहीं रहतीं, तब वे वाक्, प्राण, चक्षु व कानादि नहीं माने जाते। तब इनका शोधन कैसा? महर्षि ने इस मन्त्र को जीवितों से जोड़ा है, जो सर्वथा युक्त है। महर्षि ने वेद के मस्तक से हिंसा के कलंक को सर्वथा हटाया।

वेदों के प्रति महर्षि की श्रद्धा व साधनापूर्ण किया भाष्य अनुपम है। 'गडरियों के गीतों' का लेबल हटाकर इन्हें महर्षि ने, सर्वजनहितकारी, अत्यन्त ग्राह्य व पावन-पवित्र ईश्वरीय वाणी सिद्ध किया। महर्षि व्यास के शब्दों में '**नहि मानुषात् श्रेष्ठतरं हि किञ्चित्**' अर्थात् मनुष्य से श्रेष्ठतर कुछ भी नहीं है, परन्तु महर्षि दयानन्द के विचार में श्रेष्ठतर मनुष्य को श्रेष्ठतम बनाने के लिए वेद-ज्ञान परम सहायक है। उनके भाष्य से ही ईश्वर, धर्म, आत्मा, प्रकृति तथा जगत् का पवित्र स्वरूप पुनर्स्थापित हुआ। वेदों में निहित रहस्यों व तत्त्वों को संसार के समक्ष शुद्ध रूप में रखकर उनके सम्बन्ध में व्याप्त अज्ञानान्धकार दूर करने का श्रेय अधिकांशत: ऋषि दयानन्द को ही जाता है। इस विषय में अरविन्द घोष का कथन उल्लेखनीय है-''वेदों का अन्तिम तथा पूर्ण प्रामाणिक भाष्य कोई भी क्यों न हो, दयानन्द का स्थान उपयुक्त शैली के प्रथम आविष्कारक के रूप में सर्वोच्च है। उन्होंने अपनी दृष्टि से पुराने अज्ञान तथा भ्रम से सत्य का अन्वेषण किया। जिन वेदों के द्वार को समय ने बन्द-सा कर दिया था, उसकी चाबियों को उसने पा लिया था।'' लोकसभा के पूर्व अध्यक्ष एम.ए. अय्यंगर के शब्दों में ''महर्षि दयानन्द की सबसे बड़ी देन यह है कि अब प्रत्येक बात की सत्यता की परख के लिए

वेद को ही प्रमाण माना जाता है।'' प्रसिद्ध आर्य कवि उदय सिंह ठाकुर के शब्द भी सच्ची बात कहते हैं-

**वेद के भेद कहाँ खुलते,**
**अरु पुराणन की प्रति मोटी न होती।**
**गप्पों की ही तुलती तोल धड़ाधड़,**
**खोटे-खरे की कसौटी न होती।।**

महर्षि से पूर्व के आचार्यों शंकर, रामानुज, माध्वाचार्य या निम्बार्क आदि की पहुँच गीता, वेदान्त दर्शन व उपनिषद् तक ही रही। वेद तक पहुंचने का प्रयास उन्होंने नहीं किया, न ही उन्हें वेदों के ऊटपटाँग भाष्य देखकर इन्हें शुद्ध करने की चिन्ता ही हुई। यह चिन्ता हुई तो केवल दयानन्द को हुई। स्वामी दीक्षानन्द के शब्दों में ''दयानन्द यदि देह है तो वेद उसका आत्मा।'' पवित्र वस्तु की पवित्रता को पवित्र व्यक्ति ही जान सकता है। संसार की पवित्रतम वाणी वेद को अपवित्रता, अवैज्ञानिकता, तर्कहीनता, अश्लीलता, अनुपयोगिता तथा गर्वहीनता के भँवरजाल से निकाल वेद को पावन, पवित्र, वैज्ञानिक, तर्कयुक्त, सभ्य व परमोपयोगी सिद्ध करने वाले महर्षि को सश्रद्ध नमन!

वेदों का डंका आलम में बजवा दिया ऋषि दयानन्द ने।
करते थे हमेशा चीख-चीख अपमान जो पावन वेदों का,
सिर उनका वेदों के आगे झुकवा दिया ऋषि दयानन्द ने।।

-प्रकाशार्य

पौराणिक पण्डितों ने १८ पुराण बनाकर वेदों के स्थान पर प्रतिष्ठित कर रखा था। ये पुराण पृथक्-पृथक् काल में पृथक्-पृथक् व्यक्तियों द्वारा रचे गए थे, परन्तु प्रचार यह किया गया था कि इनके रचनाकार ऋषि व्यास जी हैं। राजा भोज के राज्य में मार्कण्डेय पुराण और शिवपुराण बनाकर प्रचारित किए गए व्यास जी के नाम पर। इसका समाचार राजा भोज को मिला तो उसने रचनाकारों के हाथ कटवा दिए थे तथा यह आदेश दिया था कि जो भी व्यक्ति अपना ग्रन्थ रचे, वह अपने नाम से प्रचारित करे, ऋषि-मुनियों के नाम से नहीं। पुराणों में मूर्ति-पूजा, तीर्थों के प्रमाण हैं तो कथित भगवानों के चरित्र-दोषों का वर्णन भी है। विष्णु भगवान् जलन्धर नामक राक्षस से पराजित होकर उसकी पत्नी वृन्दा से जलन्धर का मेकअप करके दुराचार करता है तो ब्रह्मा अपनी पुत्री से ही सम्भोग करता है। जो मनुष्य प्रातःकाल में 'शिव' अर्थात् लिङ्ग व उसकी मूर्ति का दर्शन करे तो रात्रि में किया हुआ, मध्याह्न में दर्शन से जन्म भर का, सायं में दर्शन करने से सात जन्मों के पाप छूट जाते हैं। 'शिवपुराण' में शैवों ने शिव को परमेश्वर मानकर विष्णु, ब्रह्मा, इन्द्र, व सूर्यादि को उसके दास बताए हैं तो 'विष्णुपुराण' में विष्णु को परमात्मा माना और शिव आदि को विष्णु के दास। देवी भागवत् पुराण में देवी को परमेश्वरी जबकि शिव, विष्णु आदि उसके किङ्कर बनाये। 'भागवत' में विष्णु की नाभि से कमल, कमल से ब्रह्मा, ब्रह्मा के दाहिने पग के अंगूठे से स्वायंभव और बायें अंग से सत्यरूपा राणी, ललाट से रुद्र और मरीचि आदि पुत्र, उनसे दक्ष प्रजापति, उनकी तेरह लड़कियों का विवाह कश्यप से, उनमें से दिति से दैत्य, दनु से दानव, अदिति से आदित्य, वनिता से पक्षी, कद्रू से सर्प, सरमा से कुत्ते व स्याल आदि और अन्य स्त्रियों से हाथी, घोड़े, ऊँट, गधा, भैंसा, घास, फूस और बबूल का वृक्ष काँटे सहित उत्पन्न हो गया।

महर्षि दयानन्द ने महर्षि व्यास के नाम पर पुराणों में लिखी असत्य, तर्कहीन, अश्लील व अवैज्ञानिक बातों पर दुःखी हो 'सत्यार्थ प्रकाश' के एकादश समुल्लास में लिखा- ''जो अठारह पुराणों के कर्त्ता व्यास जी होते तो उनमें इतने गपोड़े न होते, क्योंकि शारीरिक सूत्र, योगशास्त्र के भाष्य आदि व्यासोक्त ग्रन्थों के देखने से विदित होता है कि व्यास जी बड़े विद्वान्, सत्यवादी, धार्मिक, योगी थे। वे ऐसी मिथ्या कथाएं कभी न लिखते और इससे यह सिद्ध होता है कि जिन सम्प्रदायी, परस्पर विरोधी लोगों ने भागवतादि नवीन कपोलकल्पित ग्रन्थ बनाए हैं, उनमें व्यास जी के गुणों का लेश भी नहीं था और वेदशास्त्र विरुद्ध असत्यवाद लिखना व्यास जी सदृश्य विद्वानों का काम नहीं, किन्तु यह काम विरोधी, स्वार्थी, अविद्वान् कायरों का है।'' दयानन्द द्वारा व्यास ऋषि को दी इस 'क्लीन चिट' से सिद्ध है कि व्यास जी के प्रति उनके मन में कितनी अधिक पावन भावना थी। महर्षि दयानन्द के अतिरिक्त इतिहास में किसी अन्य व्यक्ति ने आज तक व्यास ऋषि की पावनता पर लगी धूल हटाने का प्रयास नहीं किया। इतिहास इसके

लिए महर्षि का सदैव ऋणी रहेगा।

पुराणों में एक पावन महापुरुष को निकृष्ट, अश्लील, चोर, जार, भोगी के रूप में प्रस्तुत किया गया है, जिनका नाम श्री कृष्ण है। उनकी सोलह हज़ार एक सौ आठ रानियाँ थीं। अमोघ रति आदि ईश्वर कृष्ण की जितनी पत्नियाँ थीं, उन सबसे उन्होंने प्रत्येक से दस-दस पुत्र उत्पन्न किए। श्रीमद्भागवत के अनुसार रास-क्रीड़ा के समय उनके साथ व्यभिचार का स्पष्ट उल्लेख है। दशम स्कन्द के अध्याय ४८ में कुब्जा के साथ व्यभिचार का उल्लेख है। राधा वृषभानु वैश्य की कन्या थी। उसने राधा का विवाह रायाण वैश्य से कर दिया। रायाण यशोदा का भाई था अर्थात् राधा श्रीकृष्ण जी की मामी लगती थी (ब्रह्मवैवर्त पुराण), परन्तु इसी पुराण में राधा-कृष्ण के गुप्त, अनुचित सम्बन्ध का भी वर्णन है। कृष्ण पर कुत्सित व धूर्ततापूर्ण आरोप लगाए गए हैं। परस्त्रीगमन का द्वार पुराणों ने कृष्ण के माध्यम से खोल दिया तो उनके भक्तों को क्यों संकोच? कृष्ण की वास्तविक पत्नी रुक्मिणी का कोई नाम भी नहीं लेता, परन्तु कल्पित प्रेयसी राधा की ही पूजा होती है। धर्म की आड़ में यह व्यभिचार को प्रोत्साहन देना नहीं तो और क्या है? प्रमाण यह है-

**परदारता ये च ये नरा अजितेन्द्रियाः।**
**मथुरावासिनः सर्वे ते देवा न विग्रहाः।।**

-वाराह पुराण १६६/६१

अर्थात् मथुरा के निवासी दूसरों की स्त्रियों से व्यभिचार करने वाले सभी कामी लोग देवता हैं, यह निर्विवाद है।

नैतिकता, मर्यादा, आदर्श व सिद्धान्तों का स्पष्ट हनन आप पुराणों के कृष्ण के चरित्र में देख सकते हैं। अंकुशता की सभी मर्यादाएँ तोड़ने वाले पुराणों में कृष्ण-चरित्र के साथ खुलकर खिलवाड़ किया गया तो भी हिन्दू जाति की आँख नहीं खुली। ईसाई प्रचारकों ने कृष्ण के पुराणमय चरित्र को आधार बनाकर सामान्य व अशिक्षित वर्ग में ईसामसीह की पवित्रता व महानता का बहुत प्रचार किया, क्योंकि श्रीकृष्ण का यह चरित्र समाज को निकृष्ट प्रेरणा देता रहा है। ईसाई मिशनरी आज भी अपने कार्यक्रमों में ईसामसीह व कृष्ण जी के चित्र लटकाकर दर्शकों व श्रोताओं से पूछते हैं- ''इनमें से एक हमारा ईश्वर तुम्हारे पाप लेकर फाँसी पर लटक गया जबकि दूसरा तुम्हारा ईश्वर नदी में स्नान कर रही नारियों के वस्त्र लेकर पेड़ पर चढ़ बाँसुरी बजाता है। स्नान कर रही नारियाँ उससे वस्त्र माँगती हैं, परन्तु वह उन्हें नग्न देखता व बाँसुरी ही बजाता रहता है। बताओ! इन दोनों में कौन परोपकारी व महान् है?'' सामान्य लोगों का उत्तर क्या होगा, यह आप सहज ही सोच सकते हैं। योगेश्वर कृष्ण के चरित्र का यह प्रभाव बड़े-बड़े उपदेशकों, संन्यासियों तथा जन सामान्य पर रहा, परन्तु इसका निराकरण महर्षि दयानन्द के अतिरिक्त किसी ने नहीं किया। 'सत्यार्थप्रकाश' के एकादश समुल्लास में वे लिखते हैं-''देखो! श्री कृष्ण जी का इतिहास महाभारत में अत्युत्तम है। उनका गुण, कर्म, स्वभाव और चरित्र आप्त-पुरुषों के सदृश है जिसमें कोई अधर्म का आचरण श्री कृष्ण जी ने जन्म से मरणपर्यन्त बुरा काम कुछ भी किया हो, ऐसा नहीं लिखा और इस भागवत वाले ने अनुचित मनमाने दोष लगाए हैं। दूध, दही, मक्खन आदि की चोरी और कुब्जा दासी से समागम, परस्त्रियों से रास मण्डल, क्रीड़ा आदि मिथ्या दोष श्री कृष्ण जी पर लगाए हैं।'' एक पावन महापुरुष पर लगे आरोपों को झुठलाकर उसको उज्ज्वल चरित्र-प्रमाणपत्र देकर उसे पावन-पवित्र घोषित करने के महर्षि के सद्प्रयास की जितनी भी कृतज्ञता ज्ञापित की जाए, वह कम है।

महर्षि दयानन्द से पूर्व अधिकतर लोग छः शास्त्रों में परस्पर सैद्धान्तिक विरोध देखते-मानते थे। पावन शास्त्रों को अस्वीकारते थे, परन्तु महर्षि ने इसका खण्डन करके इन्हें परस्पर अविरोधी घोषित किया-''विरोध उसको कहते हैं कि एक कार्य में एक ही विषय पर विरुद्धवाद होवे। छः शास्त्रों में अविरोध देखो इस प्रकार है-मीमांसा (दर्शन) में-ऐसा कोई भी कार्य जगत् में नहीं होता कि जिसके बनाने में कर्मचेष्टा न की जाय। वैशेषिक (दर्शन) 'समय न लगे बिना बने ही नहीं।' न्याय (दर्शन) में-'उपादान कारण न होने से कुछ भी नहीं बन सकता।' योग (दर्शन) में- 'विद्या, ज्ञान, विचार न किया जाय तो नहीं बन सकता।' सांख्य (दर्शन)-'तत्त्वों का मेल न होने से नहीं बन सकता।' और वेदान्त (दर्शन) में- 'बनाने वाला न बनावे तो कोई भी पदार्थ उत्पन्न न हो सके।' इसलिए सृष्टि छः कारणों से

बनती है। उन छः कारणों की व्याख्या एक-एक की एक-एक शास्त्र में है। इसलिए उनमें विरोध कुछ भी नहीं। जैसे छः पुरुष मिलकर एक छप्पर उठाकर भित्तियों पर धरें, वैसा ही सृष्टि रूप कार्य की व्याख्या छः शास्त्रकारों ने मिलकर पूरी की।'' -सत्यार्थप्रकाश, अष्टम समुल्लास

संसार में वैदिक दर्शन कुल छः ही हैं। इनमें कमियाँ, त्रुटियाँ तथा परस्पर विरोध है तो वेदों को छोड़कर हमारे पास दार्शनिकता के नाम पर शेष बचता ही क्या है? महर्षि ने स्वयं इनका गहन स्वाध्याय किया व उन्हें इन शास्त्रों में परस्पर विरोधी सिद्धान्त नहीं मिले। परिणामतः वे इनके वकील बनकर आगे आए तथा डटकर इनका बचाव व समर्थन किया। अपने ग्रन्थों में यत्र-तत्र महर्षि ने अपने कथन को सही सिद्ध करने हेतु इन दर्शनों के अनेकानेक प्रमाण देकर इनके प्रति अपनी गहन निष्ठा भी प्रकट की है। पावन दर्शनों पर लगे आरोपों के उत्तर देकर इनकी पावनता को पुनःप्रतिष्ठित किया।

ऋषियों व उनके ग्रन्थों के प्रति महर्षि की निष्ठा का प्रमाण सत्यार्थ प्रकाश के तृतीय समुल्लास में उपलब्ध है-''ऋषि प्रणीत ग्रन्थों को इसलिए पढ़ना चाहिए कि वे बड़े विद्वान्, सब शास्त्रविद् और धर्मात्मा थे।'' कपिल ऋषि को ऋषि दयानन्द से पूर्व बहुत से लोग उनके ग्रन्थ 'सांख्य दर्शन' के कुछ सूत्रों की गलत व्याख्या के आधार पर अनीश्वरवादी कहते थे। महर्षि ने सत्यार्थ प्रकाश के सप्तम समुल्लास में लगभग डेढ़ पृष्ठों में कपिल ऋषि के कुछ सूत्रों के आधार पर उनका बचाव करते हुए लिखा है-''इसलिए जो कोई कपिलाचार्य को अनीश्वरवादी कहता है, जानो वही अनीश्वरवादी है, कपिलाचार्य नहीं।'' पावन कपिलाचार्य व अन्यों के प्रति महर्षि की श्रद्धा व सत्यनिष्ठा कैसी पावन थी, इसका पता उनके इस कथन से मिलता है-''यदि मैं कपिल और कणाद के युग में पैदा हुआ होता तो उनके आश्रमों में मैं झाड़ू लगाने की योग्यता भी नहीं रखता।'' पावन को पावन सिद्ध करने वाले पावन दयानन्द की स्मृति को सादर प्रणाम!

महर्षि दयानन्द से पूर्व नारी की स्थिति बड़ी निन्दनीय तथा घृणित थी। किसी ने उसे पाँव की जूती कहा था तो अन्य ने नरक का द्वार माना था। एक ने उसे पुरुषों की खेतियाँ कहा तो दूसरे ने विधवा होने पर पति के शव के साथ जल मरने की आज्ञा दी थी। नारी से ईश्वर प्रदत्त सभी अधिकार छीन लिए गए थे। न वह हवन कर सकती थी, न ही यज्ञोपवीत धारण कर पाती थी। पढ़ने के अवसर उसे प्रदान नहीं किए जा रहे थे तो युवतियों को वृद्धों के साथ ब्याह दिया जाता था। घरेलू, सामाजिक या राष्ट्रीय विषयों पर सोचने, बोलने व निर्णय करने के अधिकार भी छीन लिए गए थे। वह केवल बच्चे उत्पन्न करने वाली एक मशीन बनकर रह गई थी। बच्चे उत्पन्न करना, घरेलू कार्य करना व पति को परमेश्वर मानकर उसकी प्रत्येक इच्छा पूर्ण करना-यही उसका धर्म था, यही उसकी नियति थी। भ्रष्ट और अपावन स्थिति में जी रही नारी जाति को नरक से निकालने वाला कोई न था।

इस स्थिति में महर्षि ने महसूस किया कि नारी प्रायः स्वभाव से कोमल व हृदय से पुरुष की अपेक्षा अधिक पावन व करुणामयी होती है व समाज तथा राष्ट्र का पतन इसलिए हुआ है क्योंकि उसे अपावन स्थिति में रखकर ईश्वर प्रदत्त अधिकारों व पावन कर्त्तव्यों से वंचित कर दिया गया है। 'सत्यार्थ प्रकाश' के द्वितीय समुल्लास में महर्षि ने लिखा-''जितना माता से सन्तानों को उपदेश और उपकार पहुँचता है, उतना किसी से नहीं। जैसे माता सन्तानों पर प्रेम व उनका हित करना चाहती है, उतना अन्य कोई नहीं करता। इसीलिए मातृमान् अर्थात् ''प्रशस्ता धार्मिकी विदुषी माता विद्यते यस्य स मातृमान्।'' धन्य वह माता है कि जो गर्भाधान से लेकर जब तक पूरी विद्या (सन्तान की) न हो, तब तक सुशीलता का उपेदश करे। महर्षि ने ये विचार महाभारत से उद्धृत किए-''नास्ति मातृसमो गुरुः'' अर्थात् माता समान कोई गुरु नहीं है। नारी से जब पढ़ने का अधिकार ब्राह्मणों ने छीन रखा था, तो वह सन्तान को कैसे पढ़ा सकती थी? महर्षि से पूर्व ब्राह्मणों ने कपोल कल्पना से यह श्रुति वाक्य प्रचारित करके स्त्रियों तथा शूद्रों से वेद तथा अन्य ग्रन्थ पढ़ने का अधिकार छीन रखा था-''स्त्रीशूद्रौ नाधीयातामिति श्रुतेः।'' महर्षि ने यह भी पूछा कि ''इमं मन्त्रं पत्नी पठेत्'' इस श्रौतसूत्र के होते तुम झूठे वाक्य बनाकर स्त्रियाँ से उनका वेदादि पढ़ने का अधिकार

क्यों छीनते हो? इस सूत्र में स्पष्ट कहा है-पत्नी यज्ञ में इस मन्त्र को पढ़े महर्षि ने यजुर्वेद के मन्त्र २६/२ का भी प्रमाण देकर सिद्ध किया कि स्त्री व शूद्र को भी वेद पढ़ने का अधिकार है-

**यथेमां वाचं कल्याणीमावदानि जनेभ्यः।**
**ब्रह्मराजन्याभ्यां शूद्राय चार्याय च स्वाय चाराणाय।।**

महर्षि ने मनु के इस सिद्धान्त का भी समर्थन किया कि दश उपाध्याय एक आचार्य के बराबर, सौ आचार्य एक पिता समान तथा सहस्त्र पिता एक माता के तुल्य हैं। इसके अतिरिक्त 'पंचायतन पूजा' के अन्तर्गत सत्यार्थप्रकाश के एकादश समुल्लास में यह क्रान्तिकारी विचार भी प्रस्तुत किया कि स्त्री के लिये पति और पुरुष के लिये स्वपत्नी पूजनीय है। चित्तौड़ में एक बार चलते हुए महर्षि ने गली में खेल रही एक कन्या को देखा तो उसके आगे अपना शीश झुका दिया था। उन्होंने नारी को सिर का मुकुट माना। अतीत में नारी को बहुत उच्च आदर, अधिकार व पावनता प्राप्त थी तथा मध्यकाल में सब चौपट हो गया था। महर्षि ने गहन अध्ययन व ठोस प्रमाणों के आधार पर क्रान्ति लाकर नारी को पुनः पावन, पवित्र व वाञ्छनीय स्थान दिलाया। ऐसे क्रान्तिकारी सुधारक दयानन्द के प्रति समाज को चिर ऋणी रहना होगा।

---

इस बात का निश्चय है कि ब्रह्मचर्य्य, उत्तम शिक्षा, विद्या, शरीर और आत्मा का बल, आरोग्य, पुरुषार्थ, ऐश्वर्य, सज्जनों का संग, आलस्य का त्याग, यम-नियम और उत्तम सहाय्य के विना किसी मनुष्य से गृहाश्रम धारा जा नहीं सकता।

**- महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.३१**

सब व्यवहार करने वालों को चाहिये कि जो मनुष्य जिस काम में चतुर हो उसको उसी काम में प्रवृत्त करें।

**-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.२०**

जैसे पवन सब को सुख देता हुआ सब के रहने का स्थान हो रहा है वैसे ही विद्वान् को होना चाहिये।

**-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ५.४१**

## एक आहुति
## अपने आचार्य के लिए.....

ऋषि दयानन्द की उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा की तन, मन, धन से सेवा करने वाले, उसे अपनी मातृवत् समझने वाले और यहाँ तक कि अपना जीवन समर्पित कर देने वाले डॉ. धर्मवीर आज अपना समस्त भार आर्य जनता अर्थात् अपने उत्तराधिकारियों पर छोड़ गये हैं। उन्होंने ऋषि के स्वप्नों को अपना कर्त्तव्य समझकर सभा को गगनचुंबी ऊँचाइयों तक पहुँचाया। अनेक नये प्रकल्प चलाये यथा-वैदिक गुरुकुल, गौशाला, आश्रम, अतिथियों के ठहरने व खान-पान की निःशुल्क व्यवस्था आदि। उन्होंने जो-जो कार्य छेड़े उनकी आवश्यकताओं की पूर्ति में कभी न्यूनता न आने दी। परोपकारिणी सभा ऐसे पुत्र को प्राप्त कर गौरव का अनुभव करती है और बिछुड़कर शोकग्रस्त होने का भी। उनके द्वारा शुरु किये कार्य कभी शिथिल न पड़ें, इस कारण **सभा ने डॉ. धर्मवीर जी की स्मृति में एक करोड़ रु. की स्थिर निधि बनाने का संकल्प लिया है,** जिससे कि धन धर्म के काम आ सके। इसमें सन्देह नहीं कि ये समस्त कार्य आर्य जनता के सहयोग से ही प्रारम्भ हो सके हैं और सहयोग से ही चल भी रहे हैं। इसलिये इसमें भी सन्देह नहीं कि सभा के इस संकल्प को आर्य जनता शीघ्र पूर्णता की ओर पहुँचा देगी और शायद उससे भी कहीं बढ़कर। यज्ञ तो हवि माँगता है। बिना हवि के यज्ञ की कल्पना भी क्या? बस देरी तो सूचित होने की है। हवि बनना तो आर्यों के खून में है, तन से, मन से अथवा धन से।

आप अपना दान चैक, ड्राफ्ट या सभा के खाते में सीधे भी भेज सकते हैं। कृपया, राशि भेजने के पश्चात् सभा में दूरभाष या पत्र द्वारा अवश्य सूचित कर दें।

**- मन्त्री**

# वेदों में आधुनिक अद्‌भुत विज्ञान

डॉ. विक्रम कुमार 'विवेकी'

आज विज्ञान का चामत्कारिक युग है। जिस काम को हम अधिकांश रूप में आ-जा करके करते थे, वे सब आज घर बैठे ही कर लेते हैं। आज कम्प्यूटर, लैपटॉप, मोबाइल ने तहलका मचा दिया है। दूरस्थ मित्रों एवं पारिवारिक जनों से अब आमने-सामने जैसी भेंटवार्त्ता, समाचारों एवं भाषणों का सम्पूर्ण विश्व में लाइव टेलिकास्ट (जीवन्त प्रसारण), विविध खेलों का क्रीड़ांगण से भी अधिक सुविधाजनक एवं सटीक दर्शन, विविध युद्धों, कक्षाओं में दिये जाते हुए लैक्चरों, पृथिवी, ग्रह-नक्षत्रों, अनन्त आकाश व समुद्र की अतल गहराइयों में घटती हुई घटनाओं का यथार्थ दर्शन एवं श्रवण हम बैडरूम में बैठे-बैठे ही कर लेते हैं। यह सब कैसे हो रहा है? यह एक यक्ष-प्रश्न है। परन्तु उत्तर वैज्ञानिक है और यह उत्तर ऋग्वेद के प्रथम मण्डल के प्रथम सूक्त के प्रथम मन्त्र में है। पाठक पढ़कर चौंक रहे होंगे, परन्तु यह शाश्वत सत्य है। इस सत्य को जानने के लिए आइये हम वैदिक यात्रा करते हैं।

वेद शब्द को प्रायः सबने सुना है। जिसका साक्षात् अर्थ है ज्ञान (नॉलेज)। ऋग्वेद के प्रथम मन्त्र में ही उपर्युक्त विज्ञान की सूक्ष्म चर्चा है। मन्त्र है-''अग्निमीडे पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम्। होतारं रत्नधातमम्।।'' इस मन्त्र में छोटा सा वाक्य है-'अग्निम् ईडे', जिसका अर्थ है-मैं अग्नि की स्तुति करता हूँ। शेष शब्द अग्नि के पाँच विशेषण हैं।

यह अग्नि क्या है, कैसी है, कौन सी है, कहाँ है, क्या करती है, इसका स्वरूप एवं स्वभाव क्या है? आदि अनेक प्रश्न उठते हैं, जिनके समाधान इसी मन्त्र के विशेषणों में तथा अन्य अगले आठ मन्त्रों में स्थान-स्थान पर दिये गये हैं। समग्र वैदिक वाङ्मय में अग्नि के मुख्यतया तीन स्वरूप बताये गये हैं। वे हैं-१. सूर्याग्नि २. विद्युदग्नि एवं ३. पार्थिवाग्नि। अग्नि शब्द के दर्जनों अर्थ होते हैं जिनको स्वामी दयानन्द सरस्वती कृत भाष्य में देखा जा सकता है। जैसे-ईश्वर, अध्यापक, नायक आदि, परन्तु यहाँ विज्ञान के क्षेत्र में केवल अग्नि से ही तात्पर्य है। उपर्युक्त तीनों अग्नियाँ भौतिक अग्नि ही हैं। पंच महाभूतों में जो अग्नि नामक भूत-तत्त्व है उसी के ही ये तीन स्वरूप हैं। आकाश, वायु, अग्नि, जल, पृथिवी नामक पाँच महाभूतों से पाठक सुपरिचित हैं। पार्थिवाग्नि तो वह है जो रसोईघर आदि में प्रज्वलित होकर हमारी सेवा करती है। सूर्याग्नि के बिना सृष्टि की परिकल्पना तक नहीं की जा सकती है। विद्युदग्नि इन सब में अद्‌भुत है जो उपर्युक्त समग्र विज्ञान का आधार-तत्त्व है।

कम्प्यूटर या मोबाइल आदि में दो तत्त्व मुख्य हैं-ठोस पदार्थ एवं सूक्ष्म पदार्थ (हार्डवेयर एवं सॉफ्टवेयर)। ठोस पदार्थ स्थूल होता है जो दिखाई देता है, सूक्ष्म पदार्थ अदृश्य होता है। विद्युत् अग्नि करण्ट के रूप में अदृश्य ही होती है। यही मुख्य सॉफ्टवेयर है। इसके बिना किसी भी विज्ञान का आविर्भाव ही असम्भव है। विद्युत की गति विस्मयकारिणी है। इसी के कारण ही मोबाइल, कम्प्यूटर आदि सक्रिय होकर वास्तविक परिणाम दे पाते हैं। विद्युत् न हो तो ये सब केवल पार्थिव निष्क्रिय तत्त्व ही होते हैं। एक ही घर में बैठे दो सदस्य मोबाइल में जब बातें करते हैं तो उनकी पारस्परिक शारीरिक दूरी एक कमरे से दूसरे कमरे तक की होती है, परन्तु यह कितना वैज्ञानिक सत्य है कि उनके वार्तालाप की ध्वनि उपग्रहों के माध्यम से हजारों किलोमीटर की द्रुतगति से विद्युत् अग्नि (स्पैक्ट्रम) के माध्यम से एक-दूसरे तक स्पष्टतया पहुँच रही होती है। विद्युत् न हो तो ये सब संसाधन निरर्थक हैं।

इसरो ने फरवरी में एक साथ १०४ उपग्रह छोड़ने का रिकार्ड बनाने के बाद अपने 'पी.एस.एल.वी.' प्रक्षेपण यान से ३१ उपग्रह लॉन्च किए, जिसमें २९ नैनो उपग्रह अन्य देशों के थे। इसमें भारत का जो उपग्रह है वह सरहद एवं पड़ोसी देशों पर निगाह रखता है। यह उपग्रह ५०० किलोमीटर की ऊँचाई से पड़ोसी देश के टैंकों की गिनती तक कर सकता है। सर्जिकल स्ट्राइक के चित्रों का सम्प्रेषण भी इन उपग्रहों के द्वारा ही हुआ है। इन उपग्रहों काम का पूर्ण होने के बाद भी वे अपनी कक्षा में ३० हजार किलोमीटर प्रति सैकेण्ड की भीषण रफ्तार से घूमते रहते हैं। पाठक

यहाँ थोड़ी देर तक अन्तश्चक्षु से विद्युत् गति की परिकल्पना करें। जाहिर है कि इन उपग्रहों का प्रक्षेपण, फिर उन्हें वांछित ऊँचाई की कक्षा में स्थापित करना, उन्हें नियन्त्रित करना, उनसे प्राप्त महत्त्वपूर्ण डेटा का सही इस्तेमाल करना एक बड़ी जटिल टेक्नोलॉजी का नतीजा है। ऐसे-ऐसे राडार बनाए गये हैं, जो ३० सेंटीमीटर तक के आकार की चीजों का १००० किलोमीटर की दूरी से ही पता लगा लेते हैं। इन दूरसंवेदी उपग्रहों की मदद से धरती के भीतर के खनिज भण्डारों का भी पता लगाया जाता है। यह सब कैसे हो रहा है? सूर्य, पृथिवी अन्य ग्रह नक्षत्रों का आकार व पारस्परिक दूरी का सटीक ज्ञान कैसे लगाया गया है? विमानों की गति, गति का नियन्त्रण, शारीरिक एवं बाह्य समस्त यन्त्रों का संचालन, समग्र ब्रह्माण्ड की समस्त गतिविधियाँ इसी अग्निविद्या पर ही तो आधारित हैं। यह अग्नि सर्वत्र एवं हमारे सम्मुख सर्वदा विद्यमान है। इसलिए ऋग्वेद के मन्त्र में पहला विशेषण कहा गया है-'पुरोहितम्' अर्थात् जो अग्नि के रूप में, आर्कषण शक्ति के रूप में, विद्यमान है। 'पुरोहित' शब्द का तात्पर्य केवल मन्दिर का पुजारी या पण्डित ही नहीं होता। पण्डित को भी पुरोहित इसलिए कहते हैं कि वे हमारे अग्रणी माने जाते हैं- अस्तु।

यह अग्नि अग्रणी है। निरुक्तकार यास्क ने भी लिखा है-''**अग्निरग्रणिर्भवति, पुरः एनं दधति**'' अर्थात् अग्नि अग्रणी इसलिए है क्योंकि यह सबसे आगे होती है 'पुरोहित' इसलिए कहलाती है क्योंकि यह सबको आगे रखती है, विज्ञान इस अग्नि तत्त्व के बिना पंगु है। यह न हो तो सोचिए जीवन कितना दूभर हो जाए।

यह अग्नि '**यज्ञस्य देवम्**' भी है। यज्ञ का देवता है। यज्ञ से तात्पर्य केवल यज्ञकुण्ड की अग्नि मात्र अर्थ नहीं है। '**यज्ञो वै श्रेष्ठतमं कर्म**' के अनुसार प्रत्येक श्रेष्ठतम कर्म यज्ञ है और यह अग्नि उन समस्त श्रेष्ठकर्मों का देव है। '**देवो दानाद् वा दीपनाद् वा द्युस्थानो भवतीति वा**' (निरुक्त)। बहुत कुछ देने, प्रकाशित होने व द्युलोक में भी उसकी सत्ता होने के कारण अग्नि 'देव' कहलाता है। यह अग्नि ऋत्विक् भी है अर्थात् ऋतुओं-मौसमों का निर्माता है। इसे 'होता' भी कहा गया है क्योंकि यह शिल्प क्रियाओं से उत्पन्न करने योग्य पदार्थों का देनेहारा है। इसे 'रत्नधातमम्' भी कहा है क्योंकि यह अच्छे-अच्छे सुवर्ण आदि रत्नों का धारक तत्त्व है। सुवर्ण अग्नि का ही रूपान्तरण है। यहाँ हम पाठकों से निवेदन करना चाहेंगे कि वे ऋग्वेद के इस मन्त्र एवं परवर्ती अन्य मन्त्रों का दयानन्द सरस्वती के द्वारा कृत अर्थ एवं विस्तृत भाष्य को पढ़ें व गहन चिन्तन करें। स्वामी जी लिखते हैं-''यास्क मुनि ने स्थौलाष्ठीवि ऋषि के मत से 'अग्नि' शब्द का 'अग्रणी' अर्थात् सबसे उत्तम अर्थ किया है अर्थात् जिसका सब यज्ञों में पहिले प्रतिपादन होता है वह सबसे उत्तम ही है। इस कारण अग्नि शब्द से ईश्वर तथा दाहगुण वाला 'भौतिक अग्नि' इन दो ही अर्थों का ग्रहण होता है।''

अब भौतिक अर्थ के ग्रहण करने में प्रमाण दिखलाते हैं-(यदश्व) इत्यादि शतपथ ब्राह्मण के प्रमाणों से अग्नि शब्द करके भौतिक अग्नि का ग्रहण होता है। यह अग्नि बैल के समान सब देश-देशान्तरों में पहुँचाने वाला होने के कारण 'वृष' और 'अश्व' भी कहाता है, क्योंकि वह कलाओं के द्वारा 'अश्व' अर्थात् शीघ्र चलने वाला होकर शिल्पविद्या के जानने वाले विद्वान् लोगों के विमान आदि यानों को वेग से वाहनों के समान दूर-दूर देशों में पहुंचाता है। (अग्निमीडे) परमार्थ और व्यवहार विद्या की सिद्धि के लिए अग्नि शब्द करके परमेश्वर और भौतिक ये दोनों अर्थ लिए जाते हैं। जो पहले समय में आर्य लोगों ने अश्व विद्या के नाम से शीघ्र गमन का हेतु शिल्पविद्या उत्पन्न की थी वह 'अग्निविद्या' की ही उन्नति थी। आप ही आप प्रकाशमान सबका प्रकाश और अनन्त ज्ञानवान् आदि हेतुओं करके अग्नि शब्द करके परमेश्वर तथा रूप, दाह, प्रकाश, वेग, छेदन आदि गुण और शिल्प विद्या के मुख्य साधक आदि हेतुओं से प्रथम मन्त्र में भौतिक अर्थ का ग्रहण किया है।

अगले द्वितीय मन्त्र में 'अग्नि' को लेकर स्वामी जी ने अध्यापक, विद्यार्थी एवं वैज्ञानिकों को इस प्रकार परामर्श दिया है-वह (अग्नि) परमेश्वर (ईड्यः) स्तुति करने योग्य और यह भौतिक अग्नि नित्य खोजने योग्य है।

हम यहाँ दावे के साथ कहना चाहेंगे कि आज जिस तकनीक 'टेक्नोलॉजी' ने तहलका मचाया हुआ है, सॉफ्टवेयर की तकनीकी से प्रतिदिन नये-नये आविष्कार सम्मुख आ रहे हैं। दो-चार महीनों में नई तकनीक के

कारण मोबाइल पुराने हो रहे हैं, नई तकनीक से सजे मोबाइल शीघ्र गति से आ रहे हैं, ये सब अग्नि शब्द की ही प्रैक्टिकल व्याख्या मात्र हैं। मैं इस साइंस को ऋग्वेद के इस प्रथम मन्त्र की प्रैक्टिकल कमेण्ट्री मानता हूँ और इन वैज्ञानिकों को भी ऋषि-कल्प मानता हूँ, ऋषि-पुत्र मानता हूँ।

इसकी ओर भी स्वामी दयानन्द ने अपने वेदभाष्य में इस प्रकार संकेत किया है-''जो सब विद्याओं को पढ़ के औरों को पढ़ाते हैं तथा अपने उपदेश से सबका उपकार करने वाले हैं वा हुए हैं वे पूर्व शब्द से और जो अब पढ़ने वाले विद्या ग्रहण के लिए अभ्यास करते हैं वे नूतन शब्द से ग्रहण किये जाते हैं और वे सब पूर्ण विद्वान् शुभगुण सहित होने पर, ऋषि कहाते हैं।''

''और जो सर्वत्र परमेश्वर ने पूर्व और वर्तमान अर्थात् त्रिकालस्थ ऋषियों को अपने सर्वज्ञपन से जानके इस मन्त्र में परमार्थ और व्यवहार ये दो विद्या दिखलाई हैं, इससे इसमें भूत वा भविष्यकाल की बातों के कहने में कोई भी दोष नहीं आ सकता, क्योंकि वेद सर्वज्ञ परमेश्वर का वचन है। वह परमेश्वर उत्तम गुणों को तथा भौतिक अग्नि व्यवहार कार्यों में संयुक्त किया हुआ उत्तम-उत्तम भोग के पदार्थों का देने वाला होता है। पुराने की अपेक्षा एक पदार्थ से दूसरा नवीन और नवीन की अपेक्षा पहिला पुराना होता है।

देखो यही अर्थ इस मन्त्र का निरुक्तकार ने भी किया है कि- प्राकृत जन अर्थात् अज्ञानी लोगों ने जो प्रसिद्ध भौतिक अग्नि पाक बनाने आदि कार्यों में लिया है, वह इस मन्त्र में नहीं लेना, किन्तु सबका प्रकाश करने वाला परमेश्वर और सब विद्याओं का हेतु जिसका नाम विद्युत है, वही भौतिक अग्नि यहाँ अग्नि शब्द से लिया है।''

वेद में 'अश्विनौ' शब्द की भी चर्चा यत्र-तत्र-बहुत्र मिलती है। महर्षि दयानन्द सरस्वती इस 'अश्विनौ' शब्द की अभूतपूर्व व्याख्या करते हैं। प्राचीन निरुक्त आदि के प्रमाणों तथा स्वोपज्ञ 'योगज-बुद्धि' से विज्ञान से सम्बन्धित अनेक रहस्यों का उद्घाटन करते हैं। ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका के 'नौकाविमानादि विषयः' प्रकरण में वे लिखते हैं-''वायु और अग्नि आदि का नाम 'अश्वि' है, क्योंकि सब पदार्थों में 'धनंजय' रूप करके वायु और 'विद्युत्' रूप से अग्नि ये दोनों व्याप्त हो रहे हैं तथा जल और अग्नि का नाम भी 'अश्वि' है क्योंकि अग्नि ज्योति से युक्त और जल रस से युक्त हो के व्याप्त हो रहा है। 'अश्वै' अर्थात् वे वेगादि गुणों से युक्त हैं। जिन पुरुषों को विमान आदि सवारियों की सिद्धि की इच्छा हो, वे वायु, अग्नि और जल से उनको सिद्ध करें।

जो अश्वि अर्थात् अग्नि और जल हैं, उनके संयोग से भापरूप अश्व अत्यन्त वेग देने वाला होता है। उसको जितना बढ़ाना चाहें उतना बढ़ सकता है। जिन यानों में बैठ के समुद्र और अन्तरिक्ष में निरन्तर स्वस्ति अर्थात् नित्य सुख बढ़ता है जो कि वायु, अग्नि और जल आदि से वेग गुण उत्पन्न होता है, उसको मनुष्य लोग सुविचार से ग्रहण करें। यह सामर्थ्य पूर्वोक्त अश्विसंयुक्त पदार्थों ही में है। सब शिल्पी विद्वान् लोग ऐसे यानों को सिद्ध करना अवश्य जानें। जिन यानों से तीन दिन और तीन रात में द्वीप-द्वीपान्तर में जा सकते हैं। हे मनुष्य लोगो! (मनोजुवः) अर्थात् जैसा मन का वेग है, वैसे वेग वाले यान सिद्ध करो। उन रथों में (मरुत्) अर्थात् वायु और अग्नि को मनोवेग के समान चलाओ।''

आज जो चन्द्रयान, मंगलयान आदि शीघ्रगामी तथा युद्धक्षेत्र से सम्बन्धित विविध ड्रोन, टैंक, जलपोत तथा विस्मयकारी अनेक आयुधों का निर्माण हो चुका है वह सब अग्नि से सम्बन्धित ही विद्या है। अग्नि में प्रकाश है, ज्वलनशक्ति है, द्रुतगति है, विद्युत के रूप में ऊर्जा है। प्रकाश की तीव्रतम गति से हम सब सुपरिचित हैं। अतः डेस्कटॉप, लैपटॉप, पामटॉप और हर हाथ में विद्यमान मोबाइल ने जो अद्भुत क्रान्ति मचायी है, उसमें यही अग्निविद्या है और एकमात्र विचित्र विद्युद्विद्या है। अखबार, किताब, मैगज़ीन व टी. वी. के स्थान पर आज न्यूज मीडिया, सोशल मीडिया, व्हाट्सऐप, फेसबुक, मैसेंजर, यू ट्यूब, ट्विटर आदि का जो बोलबाला है वह सब इस विद्युत् का ही चमत्कार है और इस चमत्कार को नमस्कार है-''**अग्निम् ईडे पुरोहितम्।**''

# संस्था-समाचार

**अतिथि-यज्ञ**- ऋषि उद्यान की यज्ञशाला में ०१ नवम्बर को परोपकारिणी सभा के कोषाध्यक्ष श्री सुभाष नवाल ने अपने पुत्र शैलेश नवाल तथा ११ नवम्बर को दूसरे पुत्र सुशील नवाल के जन्मदिवस पर यज्ञ किया। कार्तिक पूर्णिमा ०४ नवम्बर को श्री रमेश दीक्षित ने अपने जन्मदिवस पर यज्ञ किया। ०९ नवम्बर को श्री रमेश मुनि ने अपनी पुत्रवधू-संजीव बंसल की पत्नी सौ. ममता बंसल के जन्मदिवस पर यज्ञ किया। १४ नवम्बर को श्रीमती कमला अग्रवाल ने अपने दौहित्र-ऋचा शेखर के सुपुत्र चि. अर्णव शेखर के जन्मदिवस पर यज्ञ किया। सभी यजमानों को परोपकारिणी सभा की ओर से जन्मदिवस की हार्दिक शुभकामनाएं।

**शोक सभा**- १४ नवम्बर प्रातःकालीन यज्ञ के पश्चात् आचार्य कर्मवीर ने बताया कि दर्शन योग महाविद्यालय के प्रधानाचार्य ज्ञानेश्वरार्य का हृदयगति रुकने से रात्रि एक बजे आकस्मिक देहावसान हो गया। ब्र. सत्यव्रत तथा गुरुकुल के अन्य ब्रह्मचारियों ने उनसे संबन्धित अपने-अपने संस्मरण एवं उद्‌गार सुनाये। अन्त में दो मिनट का मौन रखकर सबने उनके प्रति श्रद्धाञ्जलियां अर्पित कीं।

**विद्यार्थियों को प्रमाण-पत्र**- महर्षि दयानन्द सरस्वती की स्थानापन्न व उत्तराधिकारिणी 'परोपकारिणी सभा' द्वारा संचालित महर्षि दयानन्द आर्ष गुरुकुल, ऋषि उद्यान में अध्ययन करने वाले विद्यार्थियों को १३४ वें महर्षि दयानन्द बलिदान समारोह-ऋषि मेला २७, २८, २९ अक्टूबर २०१७ के अवसर पर गुरुकुल के आचार्य सत्यजित् एवं परोपकारिणी सभा के कार्यकारी प्रधान डॉ. सुरेन्द्र कुमार द्वारा प्रमाण पत्र दिये गये। ब्र. वरुणदेव को वैशेषिक, न्याय, वेदान्त इन तीन दर्शनों का अध्ययन करने एवं परीक्षा विशिष्ट योग्यता से उत्तीर्ण करने के लिए 'दर्शन विशारद' की उपाधि प्रदान की गई। ब्र. सन्तोष को वैशेषिक, न्याय, वेदान्त इन तीनों दर्शनों का अध्ययन करने एवं परीक्षा में प्रथम स्थान प्राप्त करने के लिए 'दर्शन विशारद' की उपाधि प्रदान की गई। ब्र. रविशंकर को योग, सांख्य, वैशेषिक, न्याय, वेदान्त इन पाँच दर्शनों एवं ग्यारह उपनिषदों का अध्ययन करने और सभी परीक्षाएं विशिष्ट योग्यता से उत्तीर्ण करने के लिए 'दर्शनाचार्य' की उपाधि प्रदान की गई। ब्र. रणजित् को योग, सांख्य, वैशेषिक, न्याय, वेदान्त इन पाँच दर्शनों एवं बृहदारण्यक, छान्दोग्य इन दो उपनिषदों का अध्ययन करने तथा परीक्षाएँ विशिष्ट योग्यता से उत्तीर्ण करने के लिए 'दर्शनाचार्य' की उपाधि प्रदान की गई। श्री रामदयाल आर्य को वैशेषिक, न्याय इन दो दर्शनों एवं ईश, केन दो उपनिषदों का अध्ययन करने और परीक्षा प्रथम श्रेणी से उत्तीर्ण करने के लिए 'दर्शन प्राज्ञ' की उपाधि प्रदान की गई। ब्र. वेदनिष्ठ को योग, सांख्य, वैशेषिक, न्याय, वेदान्त इन पाँच दर्शनों एवं ग्यारह उपनिषदों का अध्ययन करने तथा परीक्षा विशिष्ट योग्यता से उत्तीर्ण करने के लिए 'दर्शनाचार्य' की उपाधि प्रदान की गई। ब्र. रमण को योग, वैशेषिक, न्याय, वेदान्त इन चार दर्शनों एवं बृहदारण्यक, छान्दोग्य दो उपनिषदों का अध्ययन करने तथा परीक्षाएँ प्रथम श्रेणी से उत्तीर्ण करने के लिए 'दर्शन विशारद' की उपाधि प्रदान की गई। ब्र. अभिषेक और ब्र. मनोज को वैशेषिक, न्याय इन दो दर्शनों का अध्ययन करने एवं परीक्षाएँ उत्तीर्ण करने के लिए 'दर्शन प्राज्ञ' की उपाधि प्रदान की गई। ब्र. कश्यप को निरुक्त का अध्ययन करने एवं परीक्षाएँ उत्तीर्ण करने के लिए 'निरुक्ताचार्य' की उपाधि प्रदान की गई। ब्र. वामदेव को योग, सांख्य, वैशेषिक, न्याय, वेदान्त इन पाँच दर्शनों, ग्यारह उपनिषदों तथा निरुक्त का अध्ययन करने एवं परीक्षाएँ उत्तीर्ण करने के लिए 'दर्शनाचार्य' और 'निरुक्ताचार्य' की उपाधियाँ प्रदान की गईं। ब्र. दिलीप को योग, वैशेषिक, न्याय, वेदान्त इन चार दर्शनों एवं बृहदारण्यक, छान्दोग्य दो उपनिषदों का अध्ययन करने एवं परीक्षाएँ उत्तीर्ण करने के लिए 'दर्शन विशारद' की उपाधि प्रदान की गई। ब्र. दिवाकर को न्याय दर्शन का अध्ययन करने पर प्रमाण-पत्र प्रदान किया गया। ब्र. तीर्थराम को न्याय दर्शन का अध्ययन

करने एवं परीक्षा प्रथम श्रेणी से उत्तीर्ण करने पर प्रमाण-पत्र प्रदान किया गया। श्री प्रशान्त शर्मा को वैशेषिक, न्याय इन दो दर्शनों का अध्ययन करने एवं परीक्षाएं प्रथम श्रेणी से उत्तीर्ण करने के लिए 'दर्शन प्राज्ञ' की उपाधि प्रदान की गई। श्री सत्यव्रत को योग, वैशेषिक, न्याय इन तीनों दर्शनों का अध्ययन करने एवं परीक्षाएँ विशिष्ट योग्यता से उत्तीर्ण करने के लिए 'दर्शन विशारद' की उपाधि प्रदान की गई। श्री सेवकराम को वैशेषिक, न्याय इन दो दर्शनों का अध्ययन करने एवं परीक्षा प्रथम श्रेणी से उत्तीर्ण करने के लिए 'दर्शन प्राज्ञ' की उपाधि प्रदान की गई। श्री गिरधारी लाल को योग, सांख्य, वैशेषिक, न्याय इन चार दर्शनों एवं बृहदारण्यक, छान्दोग्य दो उपनिषदों का अध्ययन करने तथा परीक्षाएँ प्रथम श्रेणी से उत्तीर्ण करने के लिए 'दर्शन विशारद' की उपाधि प्रदान की गई। श्रीमती सुकामा आर्या को योग, सांख्य, वैशेषिक, न्याय, वेदान्त इन पाँच दर्शनों एवं ग्यारह उपनिषदों का अध्ययन करने तथा परीक्षाएँ विशिष्ट योग्यता से उत्तीर्ण करने के लिए 'दर्शनाचार्या' की उपाधि प्रदान की गई। श्रीमती सीमा रावत को योग, सांख्य, वैशेषिक, न्याय, वेदान्त इन पाँच दर्शनों एवं ग्यारह उपनिषदों का अध्ययन करने तथा परीक्षाएँ प्रथम श्रेणी से उत्तीर्ण करने के लिए 'दर्शनाचार्या' की उपाधि प्रदान की गई। इन विद्यार्थियों द्वारा दर्शन विद्या का जीवन में उपयोग लेने, सुरक्षित रखने व देश-विदेश में प्रसारित करने की आशा के साथ परोपकारिणी सभा सभी के उज्ज्वल भविष्य की मंगलकामना करती है।

**अतिथि**- ऋषि उद्यान में महर्षि दयानन्द सरस्वती संग्रहालय देखने, संन्यासियों-विद्वानों से मिलने, दैनिक यज्ञ एवं प्रवचन से लाभ लेने, भ्रमण एवं प्रचार के लिए देश-विदेश के संन्यासी, वानप्रस्थी, विद्वान्, ब्रह्मचारी, गृहस्थ स्त्री-पुरुष, बच्चे निरन्तर आते रहते हैं। पिछले १५ दिनों में भीलवाड़ा, पटना, रायचूर, पूना, दिल्ली, डोहरिया, बैंगलूर, सुमेरपुर, झज्जर, फर्रुखाबाद, नीमच, विदिशा, पुष्कर, नूरपूर, रोहतक, लखीमपुर, गंगानगर, अमरावती, शामली, उदयपुर, जोधपुर, कैथल, सुजानगढ़ से ७३ अतिथि ऋषि उद्यान पधारे।

**दैनिक प्रवचन**- प्रातःकालीन प्रवचन में स्वामी विष्वङ् परिव्राजक द्वारा योगसाधना की बाधाओं को प्रतिपक्ष भावना से दूर करने के उपाय पर व्याख्यान हो रहे हैं। आचार्य कर्मवीर ने उपदेश द्वारा आश्रमवासियों को लाभान्वित किया। सायंकालीन प्रवचन में सोमवार से शुक्रवार तक उपाचार्य सत्येन्द्र ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका पर चर्चा करते हैं। उपाचार्य जी की अनुपस्थिति में दो दिन ब्र. वरुणदेव ने ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका पर प्रवचन किया। शनिवार को आश्रमवासी साधकों के प्रवचन के क्रम में वानप्रस्थी श्री देवमुनि के प्रवचन हुए एवं डॉ. नन्दकिशोर काबरा ने स्वरचित कवितापाठ किया। रविवारीय सायंकालीन प्रवचन में आर्ष गुरुकुल ऋषि उद्यान के ब्र. सन्तोष ने अपने विचार व्यक्त किये।

## लेखकों से निवेदन

परोपकारी में उन लेखों, कविताओं, रचनाओं को स्थान दिया जाता है, जो **मौलिक व अप्रकाशित** हों। अतः सभी लेखकों से निवेदन है कि वे अपनी उन्हीं रचनाओं को भेजें जो मौलिक व अप्रकाशित हों।

अनेक लेखक मौलिक व अप्रकाशित रचना तो भेजते हैं, किन्तु उसे एक साथ **अनेक पत्रिकाओं को भेजते हैं।** अतः लेखकों से यह भी निवेदन है कि वे कृपया परोपकारी को वे ही रचना भेजें, जो अन्य पत्रिकाओं के लिए न भेजी हों। परोपकारी में छपने के बाद यदि अन्यत्र भेजना चाहें तो यह उनकी इच्छा पर निर्भर करता है।

कृपया लेख के अन्त में अपना **पूरा पता व चल-दूरभाष संख्या अवश्य लिखें।** लेख के स्वीकृत-अस्वीकृत होने की सूचना चल-दूरभाष पर संक्षिप्त संदेश द्वारा प्रेषित कर दी जायेगी। **परोपकारिणी सभा द्वारा रचनाओं के लिए किसी प्रकार का भुगतान नहीं किया जाता है।**

रचयिता अपनी रचना की एक प्रति कृपया अपने पास रखकर भेजें, क्योंकि **अस्वीकृत रचनायें डाक द्वारा लौटाई नहीं जाती हैं।** स्वीकृत रचना परोपकारी के किसी आगामी अङ्क में देखी जा सकती है। रचना के प्रकाशन में छः माह या अधिक समय भी लग सकता है, अतः कृपया तब तक रचना को अन्यत्र न भेजें। **-संपादक**

# भारत में मूर्ति-पूजा क्यों?

**डॉ. बिजेन्द्रपाल सिंह**

महर्षि दयानन्द सरस्वती जी महाराज ने दुनिया को समझाया कि वेद में कहीं भी मूर्ति-पूजा नहीं बतायी, न यह वेद सम्मत है। वेद में ईश्वर को अजन्मा बताया है, अनादि, अनन्त, सर्वव्यापक बताया है। जब जन्म ही नहीं लेता तो आकार कहाँ से आ गया। वह निराकार है फिर भारत में करोड़ों देवी-देवता जिनकी भिन्न-भिन्न आकृतियाँ हैं, ये कहाँ से आ गये और ग्रामों में जाओ तो अब भी नये-नये आकार-प्रकार के देवी-देवता आते जा रहे हैं।

अधिकांशत: पौराणिक भाई गणेश की आरती करते हैं। संतोषी व शेरांवाली की आरती करते हैं। हनुमान व पार्वती-शिव की आरती करते हैं। इनकी सवारी भी अनेक हैं-बैल, चूहा, शेर, गरुड़, सर्प आदि। इनके मन्दिर हैं, भव्य अष्टधातु की मूर्तियाँ स्थित हैं, उन पर मूल्यवान् पत्थर, नग, माणिक्य, मुक्ता, गोमेदक व स्वर्णाभूषण लाद दिए जाते हैं। एक मूर्ति लाखों-करोड़ों की पड़ती है। रक्षा के लिए पुजारी रहता है। कहीं चोरी न हो जाए उसके लिए व्यवस्था रहती है, सी.सी. टी.वी. कैमरे लगवाये जाते हैं, फिर भी मूर्ति की चोरी हो जाती है। रात को कोई ले गया, पुजारी ने मन्दिर कमेटी पर फोन किया कि माता जी शृंगार व जेवरात सहित गायब हैं, उनकी मूर्ति को कोई ले गया, शायद चोर ले गये। मन्दिर में श्रद्धालुओं की भीड़ लग गयी, मूर्ति कहाँ गयी? कई लाख की थी लाखों के जेवर पहने थी। बड़े आश्चर्य की बात है। थाने में रिपोर्ट हुयी। सर्वप्रथम जो पहला भक्त था पुजारी, उसे ही पकड़ा गया। उस पर डण्डा घुमाया गया, फिर जहाँ-जहाँ भ्रम हुआ वहाँ-वहाँ पकड़-हुई। पता नहीं कितनों को आज मन्दिर के स्थान पर थाने के चक्कर काटने पड़े। जिन्होंने मूर्ति चुरायी वो तो दण्ड के भागी थे ही, उनके अतिरिक्त कितने ही सज्जन-भले लोगों का भी अपमान हुआ।

यह है आज का भगवान्, जो पौराणिकों में छाया हुआ है। जगराता होता है। अधिकतर मद्य आदि पीकर देवी जागरण करते कराते हैं। कर्ज लेकर जगराता तो करा लिया, दावत भी करनी पड़ी, बड़ा भारी खर्चा आया। अब कर्ज चुकाना भारी पड़ रहा है, कंगाली सामने मुँह बाये खड़ी है।

यह आज की नहीं, सदियों की बात है। हमारे पौराणिक भाई मानते नहीं, लाखों-करोड़ों रुपये पानी की तरह बहा देते हैं। उन मन्दिरों में स्वर्ण, ताम्र, पीतल, अष्टधातु की मूर्तियाँ व उनमें हीरे, मोती, माणिक्य जड़वा देते हैं। चोरी हो जाती है तो छाती पीटते हैं। अरे भगवान् की क्या कोई चोरी कर सकता है। वह तो सबकी रक्षा करने वाला है, सर्वशक्तिमान् है। चोर के हाथों की वस्तु बन सकता है? पौराणिक मानते नहीं, न सोचते हैं, मूर्तियों को ही भगवान् समझते हैं।

ईश्वर की प्रथम बात तो यह है कि कोई मूर्ति ही नहीं हो सकती। वेद में कहा है **'न तस्य प्रतिमा अस्ति'** उसका कोई आकार ही नहीं, क्योंकि वह जन्म नहीं लेता, अजन्मा व अनादि, अनन्त, सर्वव्यापक है, सर्वशक्तिमान् है, अत: उसी की उपासना करनी योग्य है। जगत् को रचना कर चलाता व प्रलय करता है। ईश्वर जैसा कोई अन्य नहीं। उसके बराबर कोई नहीं। वह एक है, एक ही परमेश्वर है, सबकी रक्षा करता है। जीवों को कर्मानुसार फल देता है। शुभ कर्मों का फल शुभ और अशुभ कर्मों का अशुभ। सबका नियन्ता है। एक स्थान पर नहीं अपितु कण-कण में है। उसे कोई चुरा नहीं सकता, तोड़-फोड़ नहीं कर सकता। उसी निराकार ईश्वर की ही उपासना करनी चाहिए। उसे नित्य याद किया करें, स्तुति प्रार्थना उपासना करें। उस परमेश्वर की उपासना के लिए कोई खर्चा नहीं करना। न स्वर्ण, आभूषण चाहिए, न शृंगार की सामग्री, न चुनरी, न चूड़ियाँ न स्थापना करने को स्थान-मन्दिर-मस्जिद-चर्च चाहिए। न वह भोग लगवाता है, न उस पर दूध और पानी चढ़ाने की आवश्यकता है। लोग मूर्तियों पर पुष्प चढ़ाते हैं, उसकी भी कोई आवश्यकता नहीं। शंख बजाकर जगाने की भी कोई आवश्यकता नहीं। न स्नानादि कराने की आवश्यकता है। न दीपक दिखाने की आवश्यकता है।

इतना बड़ा समुद्र पानी का दिया है। नदी, तालाब, पानी उसके हैं। बादल पानी बरसाते हैं, सब उसी के हैं।

कुओं का जल उसी का तो है। उसी का उसी को चढ़ाऊँ, यह उसका ही अपमान करना है। हमारा क्या है, सब उसी का तो है। संसार में जितना भी खाद्यान्न, फल-मेवा आदि हैं, सब उसके ही तो हैं। हम जो भी वस्त्र, घर आदि प्रयोग करते हैं उसी के हैं। स्वर्ण, ताम्र आदि मूल्यवान् धातुएँ, आभूषण उसी के तो हैं, फिर उसके ही पदार्थों से उसका शृंगार करना कहाँ का औचित्य है? इतना बड़ा प्रकाश का स्रोत सूर्य उसका ही तो है, जो विश्व को प्रकाश देता है, उल्टे छोटा सा दीप जलाकर उसको प्रकाश दिखाना क्या उसका अपमान नहीं है? अर्थात् सारांश यह है कि हमें मूर्तियों की पूजा छोड़ उस परमेश्वर की उपासना करनी चाहिए जिसने सारा जगत् बनाया है, बनाकर चला रहा है। प्रत्येक जीव का उसे ध्यान है, सब पर उसकी दृष्टि है, सबको कर्मानुसार शुभ-अशुभ फल देने वाला है। मूर्ति को छोड़ निराकार, सर्वशक्तिमान्, सर्वव्यापक, सच्चिदानन्दस्वरूप ईश्वर की ही उपासना किया करें। वही सृष्टि का, जगत् का बनाने व पालन करने वाला है।

# स्वर्णिम इतिहास बोला

**राजेन्द्र 'जिज्ञासु'**

झेले दु:ख कष्ट घनेरे कीन्हा सब दूर अन्धेरा।
लाया फिर वेद-उजाला जगती पर हुआ सवेरा।।
सुनकर सिंहनाद तुम्हारा जग में फिर नवयुग आया।
सोतों ने ली अंगड़ाई डाला जो तूने फेरा।।
क्या शुभ सन्देश सुनाया, ईश्वर है एक न दूजा।
कण-कण में व्यापक प्रीतम हर मन में उसका डेरा।।
भागे सब जादू टोने, कौतुक भी गये सभी के।
भारत का गौरव जागा, सुनकर उपदेश तेरा।।
ढह गये सब इक-इक करके मुक्ति के सस्ते अड्डे।
सोतों ने आँखें खोलीं, तूने सद्ज्ञान बिखेरा।।
मानव का अहं मिटाया, ईश्वर से भेद बताया।
लाखों ही ब्रह्म बने थे, दर्शन था टेढ़ा-मेढ़ा।।
मिथ्या जो जगत् बताते, उनका भी सपना टूटा।
जागो रे सोने वालो! तूने आन्दोलन छेड़ा।।
कर्ज़न वायली को मारा, कायर डायर को मारा।
कैसा हड़कम्प मचाया, पहुँचा जो तेरा चेरा।।
तूने जो तान सुनाई, छाती किस खोल दिखाई।
लाला से काँपे गोरे, बर्मा में हुआ बसेरा।।
'लेख' ने लेख लिखे जो, श्याम ने यौवन वारा।
करने उपकार निकले, देखा न तेरा मेरा।।
कितनों ने शीश कटाये, कितनों ने जीवन वारा।
किस-किस की गाथा गायें? अपना इतिहास बहुतेरा।।
जागो रे आर्यवीरों, वैदिक दुंदुभि बजाओ।
देखो रे अण्ड-बण्ड फिर से पाखण्ड ने भारत घेरा।।
जब तक है जाति-पाँति सङ्कट सब बने रहेंगे।
स्वामी का कहना सुन तो, सबसे यह बड़ा बखेड़ा।।
नूतन इतिहास बनाओ, स्वर्णिम इतिहास बोला।
कथनी करनी को जोड़ो, होगा फिर पार बेड़ा।।

## भूल सुधार

परोपकारी के पाठकों से निवेदन है कि गत अंक नवम्बर (द्वितीय) २०१७ में पृष्ठ २१ एवं २९ एक दूसरे के स्थान पर असावधानीवश जुड़ गये हैं। अत: दोनों पृष्ठों को यथास्थान ही पढ़ा जाये। पाठकों को हुई असुविधा के लिये हमें खेद है।

# अतिथि यज्ञ के होता बनें

**महर्षि दयानन्द सरस्वती की उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा आर्य जगत् की एकमात्र ऐसी संस्था है जो सामूहिक सहयोग से ऋषि द्वारा निर्धारित लक्ष्यों की पूर्ति हेतु कृत संकल्प है।**

**सभा निरंतर प्रगति के पथ पर अग्रसर है। निरंतर अबाध गति से ऋषि उद्यान को आकर्षक एवं जन उपयोगी बनाने हेतु नव निर्माण करा रही है, वेद प्रचार पूरे देश में संचालित कर रही है, वेदों का एवं ऋषि ग्रंथों का प्रकाशन निरंतर जारी है।**

***प्रातः एवं सायं दैनिक यज्ञ***– प्रवचन, वेद–पाठ, उपनिषद्, दर्शनादि शास्त्रों की कथा द्वारा वैदिक धर्म का कार्य नियमित रूप से आश्रम में चलता है। ***गुरुकुल***– आर्ष पद्धति से संचालित गुरुकुल में पढ़ रहे ब्रह्मचारी जो साधना एवं समाज सुधार का लक्ष्य लेकर अध्ययनरत हैं उनकी सभी आवश्यकताओं की पूर्ति निःशुल्क की जाती है। ***अतिथि सेवा***– अतिथियों को यथोचित सुविधा प्रदान करने हेतु सभा पूर्णरूपेण प्रयासरत है एवं सभी सुविधाएँ आवास, प्रातराश, भोजन की व्यवस्था निःशुल्क की जाती है। ***गोशाला***– गोशाला में चालीस के लगभग पशु हैं। इससे अधिक का स्थान नहीं है। आश्रमवासियों को गोशाला में उत्पादित दुग्ध का निःशुल्क वितरण किया जाता है। ***वानप्रस्थ एवं संन्यास आश्रम***– वानप्रस्थ एवं संन्यास आश्रम में रहकर साधनारत वानप्रस्थियों एवं संन्यासियों की सभी प्राथमिक आवश्यकताओं की पूर्ति सभा द्वारा निःशुल्क की जाती है। स्वाध्याय एवं साधना की व्यवस्था है। ***विशाल पुस्तकालय***– इसमें दुर्लभ ग्रंथों का संग्रह है, सभा द्वारा शोधकर्ता छात्रों को शोध कार्य हेतु ग्रंथ निःशुल्क प्रदान किए जाते हैं जिनका लाभ स्वाध्यायशील व्यक्ति भी उठा सकते हैं। ***व्यायामशाला***– योग्य शिक्षक द्वारा नगर के युवाओं को ऋषि उद्यान में निःशुल्क व्यायाम प्रशिक्षण दिया जाता है। सभा द्वारा नियुक्त व्यायाम शिक्षक आसपास के गांवों में भी आर्यवीर दल का प्रशिक्षण शिविरों में प्रदान करते हैं।

ये सभी क्रियाकलाप आपके पावन उदार सहयोग से ही संभव हैं। जैसा कि सर्वविदित है कि सभा का आधार ही आकाशीय दानवृत्ति है। आपको प्रतिदिन अतिथि मिलना संभव नहीं फिर अतिथि यज्ञ कैसे किया जाय इसका उपाय है, कुछ राशि प्रतिदिन अतिथि यज्ञ के नाम से निकाल ली जाये और उसको एकत्र कर अतिथि सत्कार में गुरुकुल में भोजन आदि के सहयोग में दे दी जाय।

सभा के धार्मिक क्रियाकलापों एवं आवासीय स्थल ऋषि उद्यान में उपर्युक्त पावन क्रियाकलाप लम्बे समय तक अबाध चलते रहें इसके लिए सभा की योजना है कि प्रतिदिन १० रुपये अथवा प्रतिवर्ष ५ हजार की राशि प्रदान करने वाले उदार यशस्वी दानदाताओं का नाम अतिथि यज्ञ के स्थायी सदस्यों में अंकित किया जाता है ऐसे सज्जनों के नाम का परोपकारी में प्रकाशन भी किया जाता है।

***अनेक 'अतिथि यज्ञ के होता' सदस्यों का आग्रह है, निश्चित तिथि जन्मदिन, विवाह वर्षगांठ या विशेष अवसर पर वे अपनी ओर से संस्था में भोजन कराना चाहते हैं। ऐसे महानुभावों से निवेदन है कि वे अतिथि यज्ञ के होता के रूप में एक दिन के भोजन व्यय की राशि लगभग पाँच हजार एक सौ रुपये भेजते हुए इच्छित दिन का विवरण सूचित करेंगे तो उसका उल्लेख आश्रम के सूचना पट्ट पर किया जा सकेगा।***

यह अल्प राशि आप दैनिक संचय घट में जमा भी कर सकते हैं, वर्ष में लोग अरबों रुपए आग में पटाखे जलाकर व्यय करते हैं, असावधानी से बिजली जलती छोड़ इसे गंवा देते हैं आदि ऐसी छोटी–छोटी असावधानियों को रोक कर हम उसकी बचत राशि इस पावन कृत्य हेतु सभा को वर्ष में आसानी से दे सकते हैं।

सभा शिविरों के आयोजन द्वारा जन सामान्य को ऋषियों की जीवन प्रणाली सिखा रही है। आप इस योजना में स्थायी सदस्य बनकर ऋषि का संकल्प *संसार का उपकार* की पूर्ति में एक स्तम्भ बनकर सभा को सम्बल प्रदान कर सकते हैं।

यदि अपने सामर्थ्य के अनुसार राशि को न्यूनाधिक करना चाहें तो आपकी स्वतन्त्रता है अधिक से अधिक लोग परोपकारिणी सभा से जुड़ सकें, आप ऐसा करके ऋषि दयानन्द के कार्यों को आगे बढ़ाने में सहायक होंगे इसलिए ऐसी राशि निश्चित की है। आप से प्रार्थना है अपना नाम पता और संकल्प लिखकर अवगत करायें और अतिथि यज्ञ के होता बनें। अपनी राशि प्रतिमाह अथवा सुविधानुसार मनीआर्डर/डीडी/चैक द्वारा अथवा स्वयं उपस्थित होकर कार्यालय में जमा करा सकते हैं। आपका दान ८०जी (आयकर की धारा) के अंतर्गत कर मुक्त होगा।

अतः आपसे निवेदन है कि आप भी अतिथि यज्ञ के होता बनिये। जिन महानुभावों ने हमारा निवेदन स्वीकार कर यज्ञ में अपनी आहुति दी है, उनके नाम यहाँ प्रकाशित किये जा रहे हैं।

## अतिथि यज्ञ के होता

**( १६ से ३० अक्टूबर २०१७ तक )**

१. श्री भगवान स्वरूप जी, बड़ौदा २. श्री ओम प्रकाश गोयल, अजमेर ३. श्री चेतराम आर्य, रेवाड़ी ४. श्री कमल वत्स, सोनीपत ५. श्री रामकुमार, करनाल ६. श्री पुरुषोत्तम भारद्वाज, करनाल ७. श्री कमल वत्स, सोनीपत ८. श्री अमर सिंह, करनाल ९. श्री आनन्द मनीषी, लखनऊ १०. श्री अंशुमानसिंह, बीकानेर ११. श्री जयदेव शर्मा, जयपुर १२. डॉ. रमेश मुनि, ऋषि उद्यान अजमेर १३. श्री देवमुनि, ऋषि उद्यान, अजमेर १४. श्रीमती उर्मिला जी उपाध्याय, ऋषि उद्यान अजमेर १५. श्रीमती पारुल एवं श्री नवदीप चौहान, नई दिल्ली १६. श्रीमती निशा देवी एवं श्री नागेन्द्र सिंह, नई दिल्ली १७. श्रीमती पारुल तंवर एवं श्री वैभव चौहान, नई दिल्ली १८. डॉ. प्रणव देव आर्य, नई दिल्ली १९. श्रीमती एवं श्री गोपालकृष्ण सेठी, नई दिल्ली २०. श्री ब्रह्मदत्त उक्खल, नई दिल्ली २१. श्री रजनीश मोहिन्द्रा, नई दिल्ली २२. श्री गौरव सिंह, नई दिल्ली २३. श्री मुकेश कुमार आर्य, नई दिल्ली २४. श्री विशाल तंवर, नई दिल्ली २५. श्रीमती मनीषा, नई दिल्ली २६. श्री रमेश चन्द्र आर्य एवं श्रीमती रेखा आर्य, नई दिल्ली २७. श्री सुरेन्द्र सिंह वर्मा व श्रीमती सुमन वर्मा, नई दिल्ली २८. डॉ. सोनम विज एवं डॉ. आशुतोष आर्य, नई दिल्ली २९. श्री जय भगवान, दिल्ली ३०. श्री सत्यानन्द आर्य एवं श्रीमती पुष्पा आर्य, नई दिल्ली ३१. श्री प्रणव आर्य-श्रीमती शिखा आर्य, नई दिल्ली ३२. श्रीमती सुशीला गुप्ता, रांची ३३. श्री निखिलेश सोमानी, अजमेर ३४. श्री रमेश मुनि, ऋषि उद्यान, अजमेर ३५. श्री रामगोपाल गर्ग, अजमेर ३६. श्री प्रकाश किशोर खन्ना, अजमेर ३७. श्रीमती रमा आचार्य, जोधपुर।

**- परोपकारिणी सभा, अजमेर।**

## गोभक्तों से निवेदन

ऋषि-उद्यान में परमार्थ हेतु गौशाला संचालित है। गौशाला की गौवों के दूध का वितरण सभी गुरुकुलवासियों, संन्यासियों एवं आगन्तुक अतिथियों में नि:शुल्क किया जाता है। आप सभी गो-भक्तों एवं उदारमना दानदाताओं से सभा का निवेदन है कि गौवों को उत्तम चारा मिले, इसके लिए जो भी सज्जन चारा दान देना चाहें उनका स्वागत है। यदि आप दूरस्थ प्रदेश के हैं तो कृपया चारे हेतु अनुमानित राशि सभा को ड्राफ्ट/चैक/नगद भेज सकते हैं। यशस्वी दानदाताओं के नाम परोपकारी पत्रिका में प्रकाशित किए जाएँगे। आपका दान गौवों के संवर्धन में सहायक होगा।

## ऋषि-उद्यान में संचालित गौशाला के दानदाता

**( १६ से ३० अक्टूबर २०१७ तक )**

१. श्री सुरेन्द्र सिंह जी, दिल्ली २. श्री जितेन्द्र कुमार यादव, नई दिल्ली ३. श्रीमती निर्मला गुप्ता, अजमेर ४. श्री चेतराम आर्य, रेवाड़ी ५. श्री दन्ताला राजेश्वर, सीताराम नगर ६. श्री मुमुक्षु मुनि, ऋषि उद्यान, अजमेर ७. श्री किशोर सिंह अजमेर ८. श्री डॉ. मनोज गुप्ता, श्रीमती चन्द्रवरण देवी, श्रीमती ग्यारसी देवी, बीकानेर ९. श्री वसन्त कुमार, रोहतक १०. श्री ब्रजेश कुमार, रोहतक ११. श्री कपिल डम्ने, लातूर १२. श्रीमती शकुन्तला आर्या, बीकानेर १३. श्री रामेश्वर लाल, प्रतापगढ़ १४. श्रीमती कमला देवी, फरीदाबाद १५. श्रीमती कुसुमबाई, होशंगाबाद १६. श्रीमती कमला अग्रवाल, फरीदाबाद १७. श्रीमती हेमनलिनी, जयपुर १८. डॉ. रमेश मुनि, ऋषि उद्यान, अजमेर १९. श्री राधेश्याम शर्मा, अजमेर २०. श्रीमती उर्मिला उपाध्याय, ऋषि उद्यान, अजमेर २१. श्री ओमशंकर ओम, दातागंज, शाहजहांपुर २२. श्री विपिन शर्मा, नई दिल्ली २३. श्रीमती विनीता चौहान, शादुलपुर, चुरू २४. श्री ओमप्रकाश अजमेरा, करखेड़ी, अजमेर २५. श्रीमती भंवरी देवी पारीक, जयपुर २६. श्री महेशचन्द मालू, ब्यावर।

**- परोपकारिणी सभा, अजमेर।**

---

अग्नि और जल संसार के सब व्यवहारों के कारण हैं, इस से गृहस्थजन विशेष कर अग्नि और जल के गुणों को जानें और गृहस्थ के सब काम सत्य व्यवहार से करें। **- महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.२४**

**पृष्ठ संख्या ८ का शेष भाग....**

आप बाहर छोड़कर आते हो, वैसे ही उपासना में हाथ-पैर सिकुड़ जाते हैं। नट बोल्ट नहीं है, नहीं तो इनको भी हम बाहर ही रखते। हम हाथ जोड़ लेते हैं, पैर मोड़ लेते हैं, आँख बन्द कर लेते हैं, ध्यान को बाहर से हटा लेते हैं। सब कुछ समेट लेते हैं क्योंकि यात्रा अन्दर की है, बाहर की नहीं है। बुद्धि से करनी है, मन से करनी है। जब कोई काम मन से करना हो तो आँख क्या काम करेगी? एक ब्रह्मचारी है, उससे हमारे सत्येन्द्र जी, श्रीमती जी दोनों की इच्छा हुई कि कुछ बनायें, उन्होंने कहा-ब्रह्मचारी जी ऐसा करो, भाग के जाओ और एक आलू ले कर आ जाओ। उसने थोड़ी देर सोचा और फिर बोला, माता जी पहले भागूँ या पहले आलू लाऊँ। अब भी याद करते हैं तो हँसते हैं। तो भगवान् की उपासना करूँ कि भागूँ। ऐसा होगा क्या? भागने का उपासना से क्या संबन्ध है? जब मेरी यात्रा बाहर की है ही नहीं, तो मुझे साधनों की आवश्यकता ही नहीं है, इससे तब मैं इनको काम में नहीं लेता जब मेरी जरूरत ही नहीं है।

जिसको आवश्यकता नहीं है, वो संपन्न है या जिसके पास साधन नहीं है वो संपन्न है? अब देखने की बात है, परमेश्वर बड़ा गरीब है। उसके हाथ नहीं, पैर नहीं, आँख नहीं, कान नहीं, लगता तो गरीब है। चलो, कोई बात नहीं। जिसके पास जितने ज्यादा साधन होते हैं, वो उतना संपन्न होता है। कार १० हैं, संपन्न है। मकान १० हैं, संपन्न है। पैसा हजार की जगह लाख है, संपन्न है। संपन्न किससे होता है? साधनों से होता है। लेकिन एक बात नहीं सोची कभी हमने कि साधन की आवश्यकता किसे होती है? जिसे साधनों की आवश्यकता है, वो संपन्न है, या जिसे साधनों की आवश्यकता ही नहीं है। मेरे पास १० कार हैं, मैं संपन्न हूँ, लेकिन मुझे कहीं जाना ही नहीं है, तो वाहन खड़ा करने से फायदा क्या है? उसकी देखभाल कौन करेगा?

इसलिए **उपत्वाग्ने दिवे दिवे**-प्रतिदिन करना है, **दोषावस्तः**-प्रातः काल और सायंकाल करना है और **धिया**-बुद्धिपूर्वक करना है। इसके साथ एक और रोचक चीज है **नमो भरन्तः** मतलब उपासना नम्रता के बिना नहीं होती। दो काम उपासना में स्वाभाविक होते हैं, बहुत ही स्वाभाविक होते हैं। चाहे मन्दिर में करो तो होते हैं, मस्जिद में करो तो भी होते हैं, चर्च में करो तो भी होते हैं। उपासना करोगे तो दो काम होते हैं-आँखें बन्द होंगी, हाथ जुड़ जायेंगे। यात्रा अन्दर की ओर प्रारम्भ हो जाएगी। क्योंकि अन्दर की ओर प्रारम्भ होगी तो आँखें बंद हो जायेंगी और जब नम्रता का भाव आएगा तो हाथ जुड़ जायेंगे। क्योंकि हमारी जो कोई भी इच्छा, विचार, भाव है वो प्रकट कैसे होता है- शरीर के अवयवों से। कोई गुस्से में है, यह कैसे पता लगा, अरे! उसने ऐसे मुक्का उठाया। कहते हैं वो बड़ा प्रसन्न था, कैसे पता लगा? खिलखिला रहा था। हमको पता तब लगता है जब हमारा शरीर सक्रिय होता है। हमारी जो उपासना है, वो कैसे पता लगती है, कहता है **नमो भरन्तः** नमस्कार पूर्वक जब हम पास जाते हैं तो यह हमारा उपासना का प्रकार है। तो दोहरा लीजिए-

**अग्ने! त्वा उपएमसि**-हे अग्नि! हम तेरे पास आ रहे हैं। कब आते हैं? **दिवे दिवे**- प्रतिदिन आते हैं, प्रतिदिन आयेंगे। कब आयेंगे? **दोषावस्तः**- प्रातः काल और सायंकाल आयेंगे। कैसे आयेंगे? **धिया**- मन से आयेंगे, बुद्धि से आयेंगे, अंतःकरण से आयेंगे। **नमो भरन्तः**- समर्पण के साथ आयेंगे, नमस्कार के साथ आयेंगे, नम्रता के साथ आयेंगे। यह प्रकार है उपासना का। और यदि इतनी छोटी-छोटी बातों पर ही ध्यान दे लेंगे तो उपासना के लाभ से निश्चित हम लाभान्वित होंगे।

## एक संस्मरण

प्यारे धर्मवीर जी! तुमको शत शत नमन, कितना बढ़िया तरीके से समझाया है कि 'आर्य वही जो दूसरों के काम आवे'।

''कैसे तो एक व्यक्ति ऋषि उद्यान में आता है, चूँकि वो भोजन के समय आया हुआ होता है, धर्मवीर जी उसे भोजन प्रसाद कराकर भेजते हैं, यही कहकर कि भगवान् की कृपा है। बाद में वही व्यक्ति श्रीगंगानगर जिले से ८० बोरियाँ धान की भेजता है।''

हो सके आगन्तुक हमारी ८० बोरियाँ आटे की खा जावे और सेरभर आटा भी नहीं देवे, तो भी परवाह मत करना, भगवान् सब पूरता है। इसकी शिक्षा हमें धर्मवीर जी के जीवन से लेनी चाहिए। **- मोहनबाबा आर्य**

# समर्पित व्यक्तित्व-आचार्य ज्ञानेश्वरार्यः

**रामगोपाल गर्ग**

वानप्रस्थ आश्रम, रोजड़, जिला साबरकांठा, गुजरात के आचार्य ज्ञानेश्वर आर्य, सुयोग्य गुरु श्री सत्यपति परिव्राजक के शिष्य थे। किसी भी काम के करने नहीं करने के बारे में प्रश्न करने पर उनका उत्तर होता है, यदि यह कार्य ईश्वर की प्राप्ति, उसकी आज्ञा पालन के अनुसार है तो अवश्य पूरी लगन, श्रद्धा, पुरुषार्थ से करना चाहिये।

दिनांक १४ नवम्बर २०१७ की मध्यरात्रि तक आचार्य ज्ञानेश्वर जी ने इसी कसौटी पर खरा उतरते हुये सभी कार्य किये, अर्थात् जीवनपर्यन्त। इसी मध्यरात्रि को आचार्य जी ने नश्वर शरीर का त्याग अकस्मात् कर दिया, जिसने भी सुना अचम्भित हो गया। जानकारी मिली कि हृदयगति रुक गई थी। गत माहों में चिकित्सक ने सावधानी काम में लेते हुए औषधी खाने को दी थी पर आचार्य जी यह ही कहते रहे कि मुझे कुछ भी बीमारी नहीं है, दवा की आवश्यकता नहीं है। दूसरी ओर वे दूसरों की सुख-सुविधा, खान-पान, चिकित्सा आदि के लिए पूर्ण सतर्कता, सहयोग करते रहते थे। रोजड़ में शिविर-आयोजन हेतु साफ-सफाई का काम सब कर रहे थे। आचार्य जी ने ऊपर से देखा कि मैं थक गया हूँ, उन्होंने तुरन्त ब्रह्मचारी के साथ शर्बत का गिलास भेजा। काश वे ऐसी सावधानी स्वयं के लिए भी बर्तते।

बीकानेर (राजस्थान)के एक प्रतिष्ठित स्वर्णकार परिवार में जन्मे आचार्य ज्ञानेश्वर जी एम.ए. प्रथम वर्ष का अध्ययन करते हुए युवावस्था में ही आर्यसमाज के सम्पर्क में आए। लगभग २५ वर्ष की अवस्था में उन्होंने गृह-त्याग किया। गृह त्याग के कुछ दिनों बाद ही स्वामी सत्यपति जी से सम्पर्क हुआ। उनके निर्देश अनुसार आर्ष गुरुकुल कालवा में आचार्य बलदेव जी नैष्ठिक के पास लगभग साढ़े छः वर्ष तक व्याकरण महाभाष्य का अध्ययन किया एवं कुछ अध्यापन भी किया। इसके पश्चात् ज्वालापुर में गुरुकुल काँगड़ी के उपकुलपति प्रो. रामप्रसाद वेदालंकार से निरुक्त शास्त्र का अध्ययन किया। पूज्य स्वामी सत्यपति जी के साथ विभिन्न प्रान्तों में परिभ्रमण करते हुए पाँच दर्शन व उपनिषदों का अध्ययन किया। इसके अनन्तर डेढ़ वर्ष तक वैदिक धर्म का प्रचार एवं योग शिविरों का आयोजन किया।

स्वामी सत्यपति जी की विशेष प्रेरणा से वे उच्च स्तर के योगाभ्यास व दर्शनों के अध्ययन हेतु सन् १९८६ में आर्यवन रोजड़, गुजरात में आयोजित दर्शन योग प्रशिक्षण शिविर में सम्मिलित हुए, यह शिविर लगभग ढाई वर्ष चला। प्रतिभागियों को विशेष आध्यात्मिक उपलब्धियाँ प्राप्त हुईं, जिससे इस योजना को स्थायी रूप देने का विचार किया और स्वामी सत्यपति जी ने दर्शन योग महाविद्यालय नाम से आगे इस कार्य को चलाने का दायित्व उन्हें तथा उपाध्याय विवेक भूषण जी (वर्तमान नाम स्वामी विवेकानन्द जी परिव्राजक) को दिया। इस महाविद्यालय से ६० (साठ) से भी अधिक विद्वान् तैयार हुए हैं। इनमें से १३ संन्यासी भी आर्यजगत् को प्राप्त हुए हैं।

आचार्य ज्ञानेश्वर जी ने देश-विदेश में क्रियात्मक ध्यान योग प्रशिक्षण शिविरों के माध्यम से हजारों साधकों का अध्यात्म मार्ग प्रशस्त किया। लगभग ३० से भी अधिक यज्ञ प्रशिक्षण शिविरों के माध्यम से हजारों याज्ञिक परिवारों का निर्माण किया। किशोर चरित्र निर्माण शिविर एवं युवक-युवतियों के लिए व्यक्तित्व विकास शिविरों से युवाशक्ति को वैदिक धर्म से सम्बद्ध किया।

योग एवं अध्यात्म संबन्धित साहित्य, ग्रन्थ, पुस्तक-पुस्तिकाएं, चार्ट, कैलेण्डर, फोल्डर, पत्रक आदि लाखों की संख्या में प्रकाशित कराके देश-विदेश के हजारों घरों में निःशुल्क वितरण कराया।

आर्यवन रोजड़ में भव्य वानप्रस्थ साधक आश्रम, जिसमें सुविधायुक्त ५० से भी अधिक कुटीर, विशाल भू-गर्भ ध्यानकक्ष, सभा खंड, भोजनशाला आदि का निर्माण एवं संचालन किया।

आचार्य जी ने भारत के अनेक प्रान्तों में वैदिक धर्म का प्रचार-प्रसार किया ही साथ-साथ २८ बार विदेश यात्रा करके वैदिक धर्म का नाद गुञ्जायमान किया।

आपने दर्शन योग महाविद्यालय तथा वानप्रस्थ साधक आश्रम जैसी परियोजनाओं के साथ विश्वकल्याण धर्मार्थ न्यास, वैदिक आध्यात्मिक न्यास तथा विचार टी.वी. आदि संस्थाओं में भी महत्त्वपूर्ण भूमिकाओं का निर्वहन किया।

कच्छ के भूकम्प, सूरत की बाढ़ का प्रकोप आदि प्राकृतिक आपदाओं में सहायता का कार्य भी विशाल स्तर पर किया।

आज आचार्य ज्ञानेश्वर जी हमारे मध्य नहीं रहे, परन्तु उनके तपस्वी कर्मठ, परोपकारमय जीवन के कार्यों की सुगन्ध का प्रसार हजारों महानुभावों का प्रेरणा पुंज बनकर उनका मार्गदर्शन करती रहेगी।

## व्याकरण एवं दर्शन के अध्ययन हेतु प्रवेश प्रारम्भ

महर्षि दयानन्द सरस्वती की उत्तराधिकारिणी **परोपकारिणी सभा के द्वारा 'महर्षि दयानन्द आर्ष गुरुकुल' ऋषि उद्यान, अजमेर** में पिछले १८ वर्षों से प्रारम्भिक संस्कृत ज्ञान, पाणिनीय व्याकरण और दर्शनों के अध्ययन-अध्यापन का कार्य सुचारु रूप से चल रहा है। अत: व्याकरण एवं दर्शन पढ़ने के इच्छुक विद्यार्थी प्रवेश ले सकेंगे।

इस काल में ऋषि उद्यान में प्रतिदिन यज्ञोपरान्त उपदेश व प्रवचन का लाभ भी प्राप्त हो सकेगा। समय-समय पर विविध विषयों पर विद्वानों द्वारा कक्षायें भी होती रहेंगी। ब्रह्मचारियों के लिए निवास और भोजन व्यवस्था नि:शुल्क रहेगी। प्रवेश लेने वाले ब्रह्मचारियों के लिए निम्नलिखित बातें ध्यान देने योग्य हैं-

- आयु न्यूनतम १६ वर्ष हो।
- न्यूनतम १०वीं कक्षा पढ़े हुए विद्यार्थी प्रवेश ले सकेंगे।
- गुरुकुल के अनुशासन का पालन करना अनिवार्य होगा।

अधिक जानकारी हेतु सम्पर्क करें।

**स्वामी विष्वङ् परिव्राजक - ९४१४००३७५६**

समय- ९:००-१०:००प्रात:, १२:३०-१:३० मध्याह्न

**पता**- महर्षि दयानन्द आर्ष गुरुकुल, ऋषि उद्यान, पुष्कर मार्ग, अजमेर (राज.) ३०५००१

# पुस्तक-परिचय

**पुस्तक का नाम**- 'वैदिक मान्यताओं का वैज्ञानिक एवं व्यावहारिक विवेचन'

**लेखक** - डॉ. राजपाल सिंह

**प्रकाशक** - विजयकुमार गोविन्दराम हासानन्द, नई सड़क, दिल्ली।

**पृष्ठ संख्या** - १०८ **मूल्य** - ७५रु.

प्राचीन काल से इस धरा पर धर्म की प्रधानता रही है। वैदिक काल से आज तक हमारी मान्यताएँ परिवर्तित होती रही है। इस पर भी चिन्तन, मनन, मंथन आवश्यक है। हमारे दैनान्दिन जीवन में यज्ञ का अनुपम महत्त्व है। लेखक ने अथक परिश्रम के साथ मुख्य-मुख्य बिन्दुओं पर सरस, सारगर्भित भाषा में सहज-सरल रूप में अपनी लेखनी द्वारा स्पष्ट किया गया है। पाठक आद्योपान्त अध्ययन कर पूर्ण मर्म को समझने का प्रयास करें। शरीर धर्म की यथार्थता पर मंथन करें कि स्वास्थ्य किस ओर जा रहा है?

**लेखक की लेखनी पर विचार**- प्रमाण-अपनी चक्षु से देखना प्रमाण है। प्रत्यक्ष, अनुमान, आगम इसके मुख्य अङ्ग हैं। पांच तत्त्व जीवन संरक्षण हेतु परम आवश्यक हैं। प्रत्येक पदार्थ का निर्माण परमाणु द्वारा है। यज्ञ पर अनेक प्रयोग किए जा रहे हैं। ऊर्जा नष्ट नहीं होती तो कहाँ जाती है? एक शरीर में एक ही आत्मा होती है, भिन्न-भिन्न नहीं। आज अनेक ईश्वर व अवतार हैं जो स्वार्थ सिद्धि में अग्रणी है। कुछ का स्थान लोहे की सलाखों के बीच भी है। शरीर के अन्दर-बाहर कहीं भी एक स्थान में चित्त को केन्द्रित करना धारणा है। नारी का आदर्श प्राचीन काल से रहा है। आज की पाश्चात्य संस्कृति ने इसे धराशायी कर दिया है। प्रेम की व्याख्या भिन्न-भिन्न है। आज जो हो रहा है, वह प्रेम नहीं राग, आसक्ति, वासना, मोह है। मंथन से ही मार्ग स्पष्ट हो पायेगा। जीवन में सत्य का अनुसरण करें।

लेखक के सहज व्याख्या, लिखने की प्रणाली से हम वैदिक मान्यताओं के वैज्ञानिक एवं व्यावहारिक विवेचन को सहजता से समझ पायेंगे। लेखक की सफलता भी तभी संभव है, जब हम पूर्ण गोताखोर बन समझने का प्रयास करेंगे।

**देवमुनि**

# आर्यजगत् के समाचार

**१. राष्ट्रीय सम्मेलन**– सार्वदेशिक आर्य वीरांगना दल के तत्त्वावधान में वीरांगनाओं, शिक्षिकाओं एवं कार्यकर्त्ता बहिनों का राष्ट्रीय सम्मेलन परस्पर परिचय हेतु २३ व २४ दिसम्बर २०१७ को आर्यसमाज बी ब्लॉक, जनकपुरी, नई दिल्ली में आयोजित किया जा रहा है। आने की सूचना व संख्या १६ दिसम्बर तक अवश्य दे दें।

**सम्पर्क**– ०९६७२२८६८६३, ०९८१०७०२७६०

**२. सम्मानित**– विगत ६ वर्षों से इन्दौर, म.प्र. से प्रकाशित पत्रिका वैदिक संसार मासिक के प्रकाशक श्री सुखदेव शर्मा को आर्यजगत् में उत्कृष्ट पत्रिका प्रकाशन तथा वैदिक साहित्य के प्रचार-प्रसार में उल्लेखनीय योगदान हेतु ठाकुर विक्रमसिंह द्वारा शॉल, प्रशस्ति-पत्र तथा एक लाख रुपये का चेक प्रदान कर सम्मानित किया गया।

**३. वार्षिकोत्सव**– आर्यसमाज नोएडा का वार्षिकोत्सव ६ से १० दिसम्बर २०१७ को धूमधाम से मनाया जा रहा है, जिसमें ऋग्वेद पारायण यज्ञ, १०१ कुण्डीय शान्ति सौहार्द महायज्ञ, क्रान्तिकारी देशभक्ति गीत, वेद कथाएँ, महिला सम्मेमलन, ब्रह्मचारियों का बौद्धिक व शारीरिक कौशल, सत्यार्थप्रकाश सम्मेलन, महर्षि दयानन्द उपकार गुरुकुल एवं बलिदान सम्मेलन तथा अन्य कार्यक्रम आयोजित किये जायेंगे। आपकी परिवार सहित उपस्थिति प्रार्थनीय है।

**सम्पर्क**– ९८७१७९८२२१

**४. निर्वाण दिवस मनाया**– इन्दौर, म.प्र. में २२ अक्टूबर २०१७ को सम्भाग के समस्त आर्यसमाजों के संयुक्त तत्त्वावधान में एवं श्री गोविन्द आर्य की अध्यक्षता में आर्यसमाज मल्हारगंज में महर्षि दयानन्द सरस्वती के १३४वाँ ऋषि निर्वाण दिवस का आयोजन किया गया। इस अवसर पर आचार्य चन्द्रमणि याज्ञिक के ब्रह्मत्व में विशेष यज्ञ का आयोजन किया गया एवं आर्य प्रतिनिधि सभा दिल्ली के महामन्त्री श्री प्रकाश आर्य ने प्रेरणास्पद उद्बोधन दिया।

**५. वेद प्रचार सप्ताह सम्पन्न**– आर्यसमाज मन्दिर, चौक आर्यसमाज, पटियाला, पंजाब द्वारा दि. ६ से १२ नवम्बर २०१७ तक धूमधाम से वेद-प्रचार सप्ताह एवं ऋग्वेद पारायण महायज्ञ किया गया। इस अवसर पर वैदिक प्रवक्ता आचार्य डॉ. सोमदेव, भजनोपदेशक पं. सतीश सुमन आमन्त्रित थे।

**६. वार्षिकोत्सव सम्पन्न**– दि. १ से ४ नवम्बर २०१७ तक गुरुकुल महाविद्यालय शुक्रताल, जि. मुजफ्फरनगर, उ.प्र. का ५३वाँ वार्षिक महोत्सव धूमधाम के साथ सम्पन्न हुआ। इस शुभावसर पर आचार्य यज्ञवीर शास्त्री के ब्रह्मत्व में सामवेद पारायण यज्ञ का आयोजन भी किया गया। इस महायज्ञ में आचार्य प्रेमशंकर मिश्र, आचार्य पवन वीर, स्वामी सत्यवेश, आचार्य रघुवीर वेदालंकार, स्वामी शिवानन्द, स्वामी आनन्द वेश आदि ने वेद मन्त्रों की व्याख्याएँ करके श्रद्धालुओं, यजमानों और श्रोताओं को वेद का सन्देश दिया और यज्ञ करने की प्रतिज्ञा कराई।

**७. संन्यास आश्रम आरम्भ**– आर्यसमाज सुभाषगंज, बी.टी. गंज, रुड़की, जनपद हरिद्वार, उत्तराखण्ड ने अपने आर्य उपवन में वैदिक सत्संग, योग एवं संस्कार केन्द्र के साथ वानप्रस्थ/संन्यास आश्रम भी आरम्भ करने का उपक्रम बनाया है,

**८. चतुर्वेद महायज्ञ सम्पन्न**– आर्यसमाज धौलपुर, राज. के तत्त्वावधान में चार दिवसीय चतुर्वेद महायज्ञ एवं संगीतमय वैदिक सत्संग का समापन हरदेव नगर स्थित अशोक विजय कॉम्पलेक्स में ८ नवम्बर २०१७ को हुआ।

**९. वर चाहिये**– आर्य परिवार, संस्कारित, जन्मवर्ष- १९९३, कद- ५ फुट, ५ इंच., रंग-गौर वर्ण, शिक्षा- एम. टेक (कम्प्यूटर साइंस), पीएच.डी. युवती हेतु आर्यसमाजी परिवार का समकक्ष संस्कारित युवक चाहिए। **सम्पर्क**- ०९६९७५७५२६७, ०९०१८३३८७२४

**१०. वर चाहिये**– आर्य परिवार, संस्कारित, जन्मवर्ष- १९९४, कद- ५ फुट, ७ इंच., रंग-गौर वर्ण, शिक्षा- एम. सी.ए., टी.सी.एस. कम्पनी में कार्यरत युवती हेतु आर्यसमाजी परिवार का समकक्ष संस्कारित युवक चाहिए।

**सम्पर्क**- ०९६९७५७५२६७, ०९०१८३३८७२४

**११. वर चाहिये**– आर्य परिवार, संस्कारित, जन्मतिथि- २०/१०/१९९३, कद- ५ फुट, ५ इंच., रंग-गौर वर्ण, शिक्षा- बी.कॉम., फैशन डिजाइनिंग डिप्लोमा

युवती हेतु आर्यसमाजी परिवार का समकक्ष संस्कारित युवक चाहिए। **सम्पर्क- ९४२५०६९४९१**

**शोक समाचार**

**१२.** शिवपुरी, सांगानेर, जयपुर, राज. आर्यसमाज के सक्रिय सहयोगी, कर्मठ कार्यकर्ता **श्री ओमवीरसिंह आर्य** का देहावसान १५ नवम्बर २०१७ को हदयाघात से हो गया। वे स्वाधायशील तथा वैदिक संस्कृति व आर्यसमाज के प्रति पूर्णरूप से समर्पित भावनाओं से युक्त थे और ऋषि दयानन्द महाराज के अनन्य भक्तों में से एक थे। उनका अन्त्येष्टि संस्कार पूर्ण वैदिक रीति से सम्पन्न हुआ।

**१३**. परोपकारिणी सभा कार्यालय के कार्यकर्ता श्री योगेश इन्दौरा के पिता श्री रामेश्वरलाल इन्दौरा का दि. १० नवम्बर २०१७ को ६८ वर्ष की आयु में हृदयगति रुक जाने के कारण निधन हो गया। समस्त परोपकारी परिवार इस दु:खद घड़ी में ईश्वर से प्रार्थना करता है कि वे इस कष्ट को सहन करने का सामर्थ्य प्रदान करें।

**१४**. परोपकारिणी सभा के अनन्य सहयोगी, आर्यसमाज के कार्यों में सदैव तत्पर रहने वाले एवं दैनिक भास्कर जयपुर के प्रबन्ध सम्पादक श्री जगदीश शर्मा के पिता श्री रामरतन शर्मा का देहावसान दि. १७ नवम्बर को हो गया है।

**परोपकारी परिवार की ओर से हार्दिक श्रद्धाञ्जलि।**

## सांख्य दर्शन का अध्यापन

महर्षि दयानन्द सरस्वती की उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा के द्वारा 'महर्षि दयानन्द आर्ष गुरुकुल' ऋषि उद्यान, अजमेर में वर्षों से संस्कृत व्याकरण और दर्शनों का अध्यापन कार्य सुचारु रूप से चल रहा है। इसी क्रम में 'महर्षि कपिल मुनि' विरचित 'सांख्य दर्शन' का अध्यापन स्वामी विष्वङ् परिव्राजक द्वारा ०१ जनवरी २०१८ से विधिवत् रूप से कराया जायेगा। यह दर्शन ६ महीने में पूर्ण हो जावेगा।

इस काल में ऋषि उद्यान में प्रतिदिन यज्ञोपरान्त उपदेश व प्रवचन का लाभ भी प्राप्त हो सकेगा। समय-समय पर विविध विषयों पर विद्वानों द्वारा कक्षाएँ भी होती रहेंगी। ब्रह्मचारियों हेतु निवास और भोजन व्यवस्था नि:शुल्क है। अन्य शिक्षार्थियों के लिये निम्नलिखित नियम लागू होंगे-

१. पढ़ने के इच्छुक लोग अपना पंजीकरण सुनिश्चित कर लेवें। २. पृथक् आवास हेतु प्रति व्यक्ति २,०००/-दो हजार रुपये प्रतिमास अग्रिम जमा कराना आवश्यक है। ३. भोजन, प्रातराश इत्यादि के लिये प्रति व्यक्ति प्रतिमास ३,०००/-तीन हजार रुपये देय होंगे। ४. सामूहिक रूप से आवास के लिये कोई शुल्क नहीं लगेगा और पुरुषों तथा महिलाओं के लिये अलग-अलग दीर्घ कक्ष में व्यवस्था होगी। ५. बच्चों को साथ लाये जाने पर प्रार्थी को सत्र में प्रवेश नहीं दिया जायेगा। ६. किसी भी मादक द्रव्य, चाय-कॉफी आदि का सेवन निषिद्ध होगा। ७. शिक्षार्थियों को आश्रम के साफ-सफाई एवं रखरखाव में योगदान करना अपेक्षित होगा। ८. नियम व अनुशासन का पालन करना सभी को अनिवार्य होगा। ९. अकेली महिला हो, तो अवस्था ५० या ५० से अधिक होनी चाहिए। १०. प्रत्येक व्यक्ति को यज्ञशाला में आयोजित सत्संग एवं देवयज्ञ में दोनों समय आना अत्यावश्यक है।

**नोट:**- अपना पंजीकरण फोन से करा सकते हैं एवं अग्रिम राशि ऑनलाइन जमा कराने हेतु नीचे लिखे बैंक में जमा करा सकते हैं।

**खाताधारक का नाम - परोपकारिणी सभा, अजमेर (PAROPKARINI SABHA AJMER)**

१. बैंक का नाम-**भारतीय स्टेट बैंक, डिग्गी बाजार, अजमेर।**
बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या-**10158172715**
**IFSC-SBIN0007959**

२. बैंक का नाम-**आई.डी.बी.आई**, पावर हाउस के सामने,
जयपुर रोड, अजमेर। बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या-**091104000057530**
**IFSC-IBKL0000091**

**सम्पर्क सूत्र**- परोपकारिणी सभा - ०१४५-२४६०१६४, ऋषि उद्यान - ०१४५-२६२१२७०